भिनगा-राजर्षि ग्रंथावली सं० ५

राज्यप्रबन्ध शिक्षा।

अर्थात्

श्रीमान् राजा सर टी माधवराव के माइनर हिंटेस् नामक पुस्तक का हिंदी अनुवाद
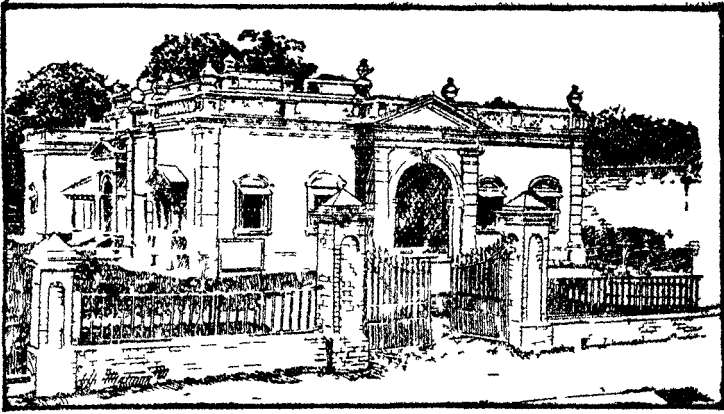
जिसे

रामचन्द्र शुक्ल ने किया

और

काशी नागरीप्रचारिणी सभा ने श्रीमान् राजा साहब भिनगा की सहायता से प्रकाशित किया।
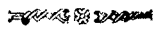
श्री अम्बिकाचरणचक्रवर्ती द्वारा महामण्डल शास्त्रप्रकाशक समिति प्रेस बनारस में छपा।

सन् १९१३ ई०।

भूमिका।

प्रत्यक्ष ज्ञान की आवृत्ति का नाम अनुभव है। सांसारिक व्यवहार में जितना दूसरों के अनुभव से हमारा काम चलता है उतना उनकी कल्पना आदि से नहीं। अपने वा दूसरों के अनुभव के सहारे हम थोड़ी दूर आंख मूंद कर भी चल सकते हैं। इतना भरोसा हमें किसी और दूसरी वस्तु पर नहीं हो सकता। किसी एक मनुष्य से यह सुनकर कि "मैं ने कई बार ऐसा होते देखा है" जितनी जल्दी हम किसी कार्य में प्रवृत्त होते हैं उतनी जल्दी सैकड़ों सत्यवादियों से यह सुन कर नहीं कि "हम निश्चय समझते हैं कि यह बात ऐसीही है।" अतः समाज के हित और सुबीते के लिए यह आवश्यक है कि उसमें अनुभव की हुई बातों का अच्छा सञ्चय रहे जिसमें लोगों को अपना कर्त्तव्य स्थिर करने के लिए इधर उधर बहुत भटकना न पड़े।

आज इस अनुवाद द्वारा हिन्दी पाठकों के सामने देशी राज्यों के प्रबंध आदि के विषय में ऐसे पुरुष का अनुभव रक्खा जाता है जिसने अपने नीतिबल और व्यवस्था-कौशल से भारतवर्ष के दो बड़े बड़े राज्यों को चौपट होने से बचाया था। जिन लोगों ने राजा सर टी० माधवराव का नाम सुना होगा वे यह भी जानते होंगे की उनकी सारी आयु देशी राज्यों की शासन-पद्धति सुधारने में बीती थी। वे बड़े भारी नीतिज्ञ और राज्य सञ्चालक थे।

माधवराव का जन्म कुंभकोणम के एक महाराष्ट्र ब्राह्मण-कुल में हुआ था। उनके पूर्वज महाराष्ट्र आधिपत्य के समय दक्षिण गए थे। उनके चाचा वेंकटराव ट्रावंकोर राज्य में दीवान

थे और पिता भी उसी रियासत में एक ऊँचे पद पर थे। माधव-राव ने मदरास के गवर्न्मेन्ट स्कूल में शिक्षा पाई और गणित और विज्ञान में बड़ी दक्षता प्राप्त की। कुछ दिनों तक ये वहाँ गणित और विज्ञान के अध्यापक रहे। फिर सन् १८४९ में आकाउंटेंट जनरल के दफ़्तर में नौकर हुए। कुछ दिनों वहां रह कर वे ट्रावंकोर के राजकुमारों के शिक्षक होकर गए। इस कार्य्य में उन्होंने इतनी दक्षता दिखाई कि उन्हें शीघ्र माल के मोहकमे में एक अच्छी जगह मिली और धीरे धीरे वे दीवन-पेशकार हो गए। जिस समय माधवराव ट्रावंकोर राज्य में घुसे उस समय उस राज्य की बड़ी बुरी दशा थी। चारों ओर घोर कुप्रबन्ध और अँधाधुन्ध थी। लार्ड डेलाहौज़ी बार बार धमका रहे थे कि यदि झटपट सुधार न हुआ तो ट्रावंकोर राज्य अंगरेज़ी राज्य में मिला लिया जायगा। माधराव ने देखा कि राज्य के वे बड़े कर्म्मचारी जिनको बाहर के स्थानों में अपने अपने काम पर रहना चाहिए, वे भी राजधानी में रह कर दीवान के विरुद्ध षट्चक्र रचा करते हैं। उन्होंने महाराज से प्रस्ताव किया कि सारा राज्य बहुत से ज़िलों में बांट दिया जाय और वे ज़िले ऐसे कर्म्मचारियों के अधीन कर दिए जांय जो वहीं रहें। इस प्रकार माधवराव के अधिकार में जो जो ज़िले पड़े उनका प्रबंध उन्होंने ठीक कर दिया। धीरे धीरे महाराज उनकी बड़ी प्रतिष्ठा करने लगे। सन् १८५७ में दीवान कृष्णराव के मरने पर माधवराव उनकी जगह दीवान बनाए गए। उस समय उनकी अवस्था केवल तीस वर्ष की थी।

दूसरा कोई होता तो ट्रावंकोर की उस समय की अवस्था देख घबड़ा जाता। जिधर देखो उधर बेईमानी, अत्याचार और अव्यवस्था। माधवराव ने निश्चय किया कि जब तक देशी राज्यों में भी अंगरेज़ी शासन के सिद्धान्तों का प्रचार न किया जायगा तब

तक उनकी अवस्था न सुधरेगी। राज्य की आर्थिक दशा दिन दिन गिरती जाती थी। माधवराव ने बहुत से सुधार किए जिनसे राज्य की आमदनी बहुत बढ़ गई। बहुत सी वस्तुओं की बिक्री आदि का अधिकार थोड़े से लोग अपने हाथ में लिए बैठे थे जिससे व्यापार बढ़ने नहीं पाता था। माधवराव ने यह प्रथा बंद करदी। बाहर जानेवाली मिर्च पर उन्होंने महसूल लगाया। पीछे अंगरेज़ सरकार से जो सन्धि हुई उसके अनुसार आमदनी और रफ़्तनी पर जो बड़े बड़े महसूल थे वे उठा दिए गए। बहुत से ऐसे कर भी उठा दिए गए जो प्रजा को बहुत खलते थे और जिनके वसूल करने में ख़र्च इतना पड़ता था कि राज्य को कुछ विशेष लाभ नहीं होता था। माधवराव ने राज्य के कर्मचारियों की भी तनख़ाहें बढ़ाई जिससे वे घूस न लें। इंजिनीयरी और शिक्षा विभाग की उन्नति की। अदालत में अच्छे क़ानून जानने वाले जज नियुक्त किए और ज़ाब्तः दीवानी, ज़ाब्तः फ़ौजदारी, हद्द मम्मायत और रजिस्टरी के क़ानून का प्रचार किया। ट्रावंकोर राज्य की काया ही पलट गई। ट्रावंकोर के महाराज इन पर इतने प्रसन्न हुए कि नौकरी छोड़ने पर भी इन्हें बहुत दिनों तक १०००) रु० महीना पेनशन देते रहे। सरकार से भी इन्हें 'सर' का ख़िताब मिला।

ट्रावंकोर से जब ये अलग हुए तब सरकार इन्हें बड़े लाट की कौंसिल की मेंबरी देने लगी, पर इन्होंने अस्वीकार किया।

सन् १८७३ में इन्दौर के महाराज तुकाजी राव होलकर ने इन्हें अपना दीवान बनाया। यद्यपि महाराज बहुत सा अधिकार अपने ही हाथ में रखते थे फिर भी इन्दौर में इन्होंने बहुत सा सुधार किया। जिन दिनों ये इन्दौर में थे उन दिनों विलायत में भारत की आर्थिक स्थिति के विचार के लिए एक कमेटी बैठी थी।

सरकार ने इन्हें विलायत जाकर उसके सामने साक्ष्य देने को कहा, पर इन्होंने अस्वीकार किया।

ठीक इसी समय महाराज मल्हर राव बड़ौदे की गद्दी से उतारे जा चुके थे। उनके समय के दुराचार, अत्याचार, कुप्रबंध, और अंधाधुंध, से बड़ौदा राज्य जर्जर हो रहा था। उत्तराधिकारी महाराज सयाजी राव नाबालिग थे। उनकी नाबालिगी में राज्य सँभाले कौन ? अन्त में माधवराव बुलाए गए।

सर माधवराव ने यहां ट्रावंकोर राज्य से भी गहरी बुराइयां पाईं जिनकी जड़ बहुत दिनों की जमी हुई थी। कुछ लोग गद्दी के लिए ज़ोर मार रहे थे। वे कुछ दे दिला कर शान्त किए गए। महाराज मल्हरराव के समय के बहुत से कर्म्मचारी राज्य का बहुत सा रुपया क़र्ज़ लिए बैठे थे जो धीरे धीरे उनसे निकाला गया। जौहरी, सौदागर, नौकर, सिपाही, तथा और बहुत से लोग जो अपना बहुत सा रुपया बाकी बताते थे संतुष्ट किए गए। इस प्रकार माधवराव ने पहले चारों ओर से षड्यंत्र की सँभावना बंद की, फिर वे शासन के सुधार में लगे।

इन्होंने एकबारगी शासन का सारा क्रम नहीं बदला। धीरे धीरे प्रजा की प्रवृत्ति बदलते हुए इस बात का सुधार किया। इन्होंने प्रजा के ऊपर से कर का बोझ भी बहुत कुछ हटाया और राज्य की आमदनी भी बढ़ाई। पुलिस का सुधार किया। न्यायालयों की व्यवस्था ठीक की। राज्य की आमदनी में से बहुत सा रुपया इन्होंने सर्वसाधारण की शिक्षा और स्वास्थ्य-रक्षा के लिए निकाला। ज़मीन की मालगुज़ारी वसूल करने के बड़े सहज ढंग निकाले। किसानों के ठेकों की मियाद इन्होंने बहुत अधिक बढ़ा दी जिससे वे ज़मीन को अपनी समझ उस पर पूरी मिहनत करने लगे। सारांश यह कि इनके अखंड परिश्रम और

नीति बल से बड़ौदा राज्य सर्वांग सुव्यवस्थित होकर पूर्ण सुख समृद्धि को पहुंचा।

सन् १८८२ में राजा सर टी० माधवराव बड़ौदा राज्य की नौकरी से अलग हुए और अन्त समय तक मदरास में रहे। ये जब तक जीए तब तक बराबर सार्वजनिक कार्य्यों में उद्योग करते रहे। नेशनल कांग्रेस की तीसरी बैठक (मदरास, १८८७) की स्वागतकारिणी समिति के ये सभापति हुए थे।

जिस समय राजा माधवराव बड़ौदे में थे उस समय वर्तमान महाराजा साहब सयाजीराव नाबालिग थे और राजकाज की शिक्षा पा रहे थे। इन्हीं महाराज साहब की शिक्षा के लिए सर माधवराव ने यह पुस्तक लिखी थी।

परम विद्योत्साही राजा साहब भिनगा की इच्छा और उदारता से यह पुस्तक सभा द्वारा प्रकाशित की गई है। उन्हीं के इच्छानुसार मूल पुस्तक के बीच बीच के कुछ अंश अनुवाद में छोड़ दिए गए हैं। अवशिष्ट में "तअल्लुकेदारों के लिए कुछ अलग बातें" राजा साहब की ओर से बढ़ाई गई हैं जिनसे उनकी प्रबन्ध-कुशलता का अच्छा परिचय मिलता है। कहने की आवश्यकता नहीं कि अनुवाद की भाषा बहुत ही सरल रक्खी गई है।

काशी।
२२ अप्रैल १९१३। } अनुवादक।

विषय सूची ।

राज्यप्रबन्ध--शिक्षा ।

—○○—

चन्दा—राजाओं के पास सभा समाजों या और अन्य कार्यों के लिये सहायता या चन्दे के लिये सैकड़ों प्रार्थनाएं पहुंचती हैं। कोई अपनी किताब के प्रकाशित हो जाने पर उसकी कुछ प्रतियां ख़रीदे जाने की प्रार्थना करता है; कोई मन्दिर, घाट, या धर्मशाला बनाने के लिये सहायता मांगता है, कोई घुड़ दौड़ के लिये कुछ चन्दा चाहता है, इसी प्रकार स्कूल, अस्पताल, नाटक, घोड़ों की नुमाइश, सूक्ष्मकला, नये व्यवसाय आदि अनेक कार्यों में महाराज से उदारता दिखाने की प्रार्थना की जायगी।

यह तो साफ़ प्रकट है कि कोई राजा या महाराजा इन सारी प्रार्थनाओं को पूरा नहीं कर सकता है। इस लिये राजा महाराजों को बहुत समझ बूझ कर काम करना होता है। यों तो इस प्रकार की बातें सामने आने पर प्रत्येक के गुण दोष का अलग अलग विचार करना होता है पर साधारणत: नीचे लिखी बातों का विचार रखना चाहिए—

पहले तो यह याद रखना चाहिये कि धन जो कि चन्दे या सहायता में दिया जायगा वह राज्य की प्रजा से उगाहा हुआ है इसके बिना सोचे विचारे मनमानी रीति से नहीं दिया

जा सकता। यह धन ऐसे ही कार्यों के लिये दिया जाना चाहिये जिन कार्यों से किसी न किसी रूप में उस प्रजा को लाभ पहुंच सकता हो।

उन चन्दों की अपेक्षा जो राज्य के बाहर ख़र्च किये जायँगे उन चन्दों का देना अच्छा है जिनका राज्य के भीतर ही व्यय होगा। ग़रीबों को लाभ पहुंचानेवाले कामों में चन्दा देना अमीरों को लाभ पहुंचानेवाले कामों में चन्दा देने से अच्छा है। दुःख दूर करनेवाली बातों में चन्दा देना सुख बढ़ानेवाली बातों में चन्दा देने से अच्छा है।

चन्दे में बहुत ज़्यादह रुपया न देना चाहिए, एक हिसाब से देना चाहिए, जिसमें और लोगों को भी चन्दा देने की आवश्यकता रहे। यदि एक ही राजा ने बहुत ज़्यादह रुपया दे दिया तो और लोगों को यह कहने का अवसर मिल जायगा कि "अमुक राजा ही ने इतना रुपया दे दिया जो इस कार्य के लिये बहुत है फिर हम को चन्दा देने की क्या आवश्यकता है।"

जिस कार्य्य के लिये जो कुछ चन्दा दिया जाय वह उसके लाभों पर विचार कर के दिया जाय, दूसरों की देखा देखी, आन में आकर या मांगनेवाले के दबाव में पड़ कर नहीं।

जो कुछ देना हो उसे या तो एकमुश्त दे दे या क़िस्त बांध कर दे दे, राज्य के सिर मासिक या वार्षिक चन्दा मढ़ देना अच्छा नहीं क्यों कि ऐसा करने से जब राज्य की अवस्था बदलने या अन्य किसी कारण से चन्दे का बन्द कर देना

ज़रूरी समझा जायगा तब उसके बन्द करने में मुशकिल पड़ेगी। ऊपर लिखे सिद्धान्तों को समझाने के लिए कुछ दृष्टान्तों का दे देना उचित है।

मान लीजिए बड़ोदा के महाराज से बंगलोर, बंबई या बड़ोदा राज्य के बाहर किसी ओर स्थान में होनेवाली घुड़ दौड़ के लिये चन्दा मांगा जा रहा है। ऐसी दशा में महाराज गायकवाड़ को चन्दा नहीं देना चाहिए। ख़ास बड़ोदा में भी ऐसी बातों में कम ही ख़र्च करना चाहिये क्यों कि बड़ोदा के लोगों को घुड़दौड़ आदि का इतना शौक़ नहीं।

यूरप या अमेरिका के कला कौशल की उन्नति के लिये बड़ोदा को चन्दा देने की ज़रूरत नहीं।

बड़ोदा राज्य के भीतर किसी नदी पर बननेवाले घाट के लिए बड़ोदे का चन्दा देना जितना उचित है उतना गोदावरी, कृष्णा, कावेरी आदि के घाट के लिये नहीं।

निज का पत्रव्यवहार—हर प्रकार के लोग राजा महाराजाओं के पास तरह तरह की चिट्ठियां भेजा करते हैं। राजा महाराजाओं को इनका उत्तर बहुत समझ बूझ कर देना चाहिए। निज का पत्रव्यवहार व्यर्थ बहुत बढ़ने न पावे। नियम तो यह होना चाहिए कि राजा महाराजा निज के पत्र बहुत कम भेजा करें। यह अच्छी बात नहीं है कि मामूली आदमी इधर उधर उनके पत्र दिखा कर कहते फिरें कि हम महाराजा साहब से पत्रव्यवहार करते हैं। कोई बात जब बहुत साधारण हो जाती है तब उसकी क़दर जाती रहती है।

इस बात का प्रबन्ध होना चाहिए कि राजा महाराजा जो चिट्ठियां भेजा करें उनकी नक़ल रक्खी जायं। ऐसा करना अनेक प्रकार से लाभदायक है। एक ऐसा भी नौकर होना चाहिए जो महाराज साहब के पास आये हुए पत्रों को अच्छी तरह सँभाल सहेज कर रक्खे। कभी कभी बहुत छोटी बातें भी बड़े काम की निकल आती हैं। इससे इन पत्रों के विषय में ऐसा प्रबन्ध रहना चाहिए कि वे काम पड़ने पर चट मिल जायँ। बहुत से पत्र तो कर्मचारी लोग राजा महाराजाओं की ओर से लिखा करते हैं। इस बात की बड़ी चौकसी रहनी चाहिए कि वे कर्मचारी अपनी ओर से कुछ घटा बढ़ा कर न लिखने पावें और न ऐसी भाषा रखने पावें जैसी भाषा रखने का अभिप्राय वा इच्छा महाराज की न हो। जितने पत्र महाराज की ओर से लिखे जायँगे उन सबके ज़िम्मेदार महाराज होंगे, इसी से इतनी चौकसी चाहिए। नियम तो यह होना चाहिए कि ऐसी चिट्ठियों के मसविदे महाराज खुद देख लिया करें और उन पर अपने दस्तख़त का चिह्न बना दिया करें जिसमें किसी तरह की भूल न रह जाय।

अच्छी सामग्री—महाराज की ओर से आनेवाले पत्र बहुत ही बढ़ियां काग़ज़ पर हों। स्याही और लिफ़ाफ़े आदि भी अच्छे से अच्छे मेल के हों। हर एक वस्तु साफ़ सुथरी और महाराज के उच्च पद के योग्य होनी चाहिए।

भेंट मुलाकात—राजा महाराजाओं का किसी के यहां खुद मिलने जाना बड़ी ही प्रतिष्ठा की बात है। इस भेंट मुलाक़ात

को इतना न बढ़ावे कि वह कोई बड़ी बात ही न समझी जाय। राजा महाराजाओं को यह न चाहिए कि जब जिसके यहां कृपा चले गए। मेरा मतलब राजघराने को छोड़ और दूसरे घरानों में ब्याह शादी आदि अवसरों पर जाने से है परस्पर जाने आने की जो रीति चली आई है उसका पालन करना तो ठीक ही है। पर इस प्रकार का नया व्यवहार बहुत समझ बूझ कर खोलना चाहिए।

बिना जाने सुने आदमी—यदि कोई नया आदमी महाराज साहेब से भेंट करना चाहे तो एक आदमी ऐसा चाहिए जो उसे महाराज के सामने पेश करे। यह एक नियम होना चाहिए कि नये आदमी महाराज के सामने परिचय के साथ पेश किए जायं। ऐसा न होने से हर तरह के भले बुरे आदमियों की पहुंच महाराज तक हो जायगी और यह बात मर्य्यादा के विरुद्ध ही नहीं बल्कि हानि पहुंचानेवाली होगी। यह नहीं कि जो चाहे सो लोगों को महाराज के सामने पेश किया करे। इस काम पर कोई प्रतिष्ठित और गंभीर आदमी रहना चाहिए जो अपनी ज़िम्मेदारी को समझे। उसके ऊपर इस बात का ज़िम्मा रहे कि वह अयोग्य मनुष्यों को महाराज के पास न लावे। ऐसे आदमियों की महाराज तक पहुंच न होनी चाहिए जिनका चालचलन बुरा हो, या जिनकी गिनती भलेमानुसों में न हो, या जो अपनी चालबाज़ियों से बढ़ना चाहते हों।

पेश करनेवाले को चाहिए कि किसी नए आदमी को

महाराज के सामने लाने के पहले उसकी भलमनसाहत आदि के विषय में अपना जी भर ले। जब कोई नया आदमी महाराज से मिलने आवे तब यह आवश्यक है कि महाराज को उससे मिलने के पहले उसके सम्बन्ध में कुछ जानकारी हो जाय जिसमें श्रीमान् को यह मालूम रहे कि उससे कैसे मिलना होगा और क्या क्या बातें करनी होंगी।

वादे—बहुत से लोग राजा महाराजाओं से अनेक प्रकार की प्रार्थनाएं किया करते हैं। राजा महाराजाओं को इस बात का ध्यान रखना चाहिए कि वे चटपट कोई बात न ले कर डालें और न बिना सोचे विचारे कोई वादा कर बैठें। अच्छा तो यह है कि किसी विषय में कोई मत प्रकाशित करने वा पक्का वादा करने के पहले महाराज विचार और सलाह करने के लिए पूरा समय ले लिया करें। ऊंचे पद और अधिकारवाले मनुष्यों को बहुत समझ बूझ कर चलना पड़ता है।

नौकर चाकर—राजा और महाराजाओं को चाहिए कि नीच नौकरों को बहुत मुंह न लगाएं। उनसे दूर ही का व्यवहार अच्छा है जिसमें वे केवल अपने काम से काम रक्खें।

नीच नौकरों को एक ऐसे अफ़सर की मातहती और निगरानी में रखना चाहिए जो इस बात की देखभाल रक्खे कि वे अपना अपना काम अच्छी तरह करते हैं। ऐसे अफ़सर को नौकरों के ऊपर कुछ इख़्तियार देना चाहिए जिसमें वे उससे कुछ आसरा भी रक्खें और उसका डर भी मानें।

नीच नौकरों को महाराज की बातचीत सुनने और

उसे इधर उधर फैलाने से रोकना चाहिए। यदि इस बात की कड़ी चौकसी न रक्खी जायगी तो ये लोग इस प्रकार की ख़बरें फैला करेंगे।

ऐसे नौकर राज्य के सरदारों, अफ़सरों, कर्मचारियों, सेठ साहूकारों या ऐसे ही और लोगों के पास भेंट करने या किसी न किसी बहाने इनाम इकराम मांगने न जाने पावें। राजा के नौकरों का इस प्रकार रुपया कमाना राजा की प्रतिष्ठा के विरुद्ध है, और इससे लोगों को तंग भी होना पड़ता है।

राजा से भेंट मुलाकात करने का प्रबन्ध ऐसा होना चाहिए कि भेंट होना या न होना छोटे नौकरों की कृपा या अकृपा पर न रहे।

नीच नौकर कभी राजा महाराजाओं से या राजा महाराजाओं के सामने ऐसी बातें न करने पावें जिनसे उन्हें कुछ प्रयोजन नहीं और जो उनकी हैसियत के बाहर हैं। जैसे नौकरों का राजाओं के सामने राजकाज के मामलों में बातचीत करना या मंत्रियों के गुण दोष बतलाना ठीक नहीं है। इस प्रकार की अनधिकार चर्चा का फल बुरा होता है।

ख़िदमतगारों का यह काम न होना चाहिए कि वे नए और बिनाजाने बूझे आदमियों को महाराज से मिलावें या किसी का कोई प्रार्थनापत्र महाराज के हाथ में दें।

ऐसे नौकरों पर इस बात की ताकीद रहे कि वे महाराज से मिलनेवालों तथा और लोगों से नम्रता का व्यवहार करें।

जब महल में किसी नौकर चाकर की या और किसी की अकस्मात् या बुरी गति से मृत्यु हो अथवा महाराज को उसकी मृत्यु के विषय में कुछ संदेह हो तो तुरन्त उसकी लाश की चीड़फाड़ या डाक्टरी परीक्षा करानी चाहिए जिसमें उसकी मृत्यु का ठीक कारण मालूम हो जाय और लिख लिया जाय। व्यर्थ के अपवादों और सन्देहों को दूर करने के लिए यह आवश्यक उपाय है।

तनख्वाहें—जहां तक हो सके महल के नौकर चाकरों की तनख़्वाह नक़द मुक़र्रर होनी चाहिये। इसमें सब को सुबीता है। सीधा और रसद इत्यादि बांधने से बहुत सी बुराइयां होती हैं।

महल के नौकर चाकर एक प्रकार से अपने निज के हैं। पर उन्हें भी यह विश्वास रहना चाहिये कि जब तक वे अच्छी तरह काम करते जायंगे तब तक बराबर लगे रहेंगे। मतलब यह कि वे बिना किसी बात के यों ही जब मौका हुई तब छुड़ा न दिए जायं। यदि वे अच्छा काम करें तो मौके से उनकी तरक़्क़ी भी हो।

ख़ास सेवा में रहनेवाले ऐसे नौकरों को जिनसे महाराज को दिन रात काम पड़ता है अच्छी तनख़्वाहें मिलनी चाहिएं। उनके साथ बर्ताव भी ऐसा होना चाहिए जिससे वे महाराज के ऊपर बड़ी श्रद्धा भक्ति रक्खें। कभी उनसे कोई बहुत अच्छा काम बन पड़े तब उनको इनाम भी मिलना चाहिए जिससे उनका उत्साह बढ़े। राजकुमारों और

रानियों के सेवकों वा दासियों के साथ भी यही होना चाहिए।

अपराध–ऐसे नौकरों के छोटे छोटे अपराधों को बहुत ज़्यादह ध्यान में न लाना चाहिये और न उनके लिए उन्हें कड़ी कड़ी सज़ायें देनी चाहिए। सब नौकरों से कुछ न कुछ अपराध हो ही जाया करते हैं। ध्यान इस बात का रखना चाहिए कि वे ऐसे छोटे अपराधों से आगे न बढ़ने पावें।

उनका दण्ड–यदि कोई महल का सेवक ऐसा आचरण करे जिससे उसको दण्ड देना आवश्यक हो तो भी उचित यही है कि उसके दण्ड के लिए स्वयं महाराज कोई कार्रवाई न करें। दंड या तो महल का कोई बड़ा अफ़सर दे या अदालत दे, जैसा मामला हो। यह इस लिए है जिसमें महाराज से व्यर्थ किसी को द्वेष न होने पावे।

मूल भृत्य–महल में जहां तक हो पुश्तैनी नौकरों को रखना अच्छा ही है क्योंकि उन्हें राजपरिवार के साथ अधिक स्नेह रहता है। यदि कोई बुड्ढा नौकर मर जाय, अथवा रोग वा बुढ़ापे आदि के कारण अशक्त हो जाय तो उसके लड़के, भाई वा और किसी संबंधी को कोई काम दे देना अच्छा है। पर राज्य के कर्मचारी नियुक्त करने में इस पैतृक सिद्धान्त पर चलना सर्वथा अनुचित है क्योंकि राज्य के कामों में विशेष गुणों की आवश्यकता रहती है।

हां कोई कोई राज्य सम्बन्धी कार्य्य ऐसे भी होते हैं जिनके करने वालों के वंशधरों में इनके योग्य गुण आ जाते

हैं, जैसे कि पटवारी और कानूनगो । यहां पैतृक सिद्धान्त का काम में लाना अनुचित नहीं है ।

कुचक्री—सभी राज-दरबारों में थोड़े बहुत कुचक्री (चालबाज) रहते हैं । राजा महाराजाओं को सावधान रहना चाहिये कि ऐसे लोगों के जाल में न फंसे । जहां कोई राजा गद्दी पर बैठा, बल्कि उसके कुछ पहिले ही से, उनके दांव पेंच चलने लगते हैं । इससे यहां उनके सम्बन्ध में दो चार बातें आवश्यक हैं ।

कुचक्री लोग अपने मतलब के बड़े पक्के होते हैं और उनके जी में अच्छी अच्छी बातें नहीं जमी रहतीं । वे चुपचाप इधर उधर की बातें बहुत करना चाहते हैं । वे झूठी और बिना सोची समझी बातें मुंह से निकालते हैं । छोटी सी बात को भी खूब बढ़ाते हैं, राई का पहाड़ करते हैं । मामलों पर झूठी रंगत चढ़ाते हैं । वे सदा खुशामद और चापलूसी द्वारा अपने को प्रिय बनाने के यत्न में रहा करते हैं ।

यदि राजा महाराजा इन लक्षणों को ध्यान में रक्खें और उनकी एक एक बात पर दृष्टि दें तो कुचक्री को पहचान सकते हैं । राजाओं को चाहिये कि जब कभी वे इस ढंग से कुचक्री को पहचान लें तब फिर उसकी ओर कान न करें और उसे दूर रक्खें, जितना ही कम सरोकार राजा महाराजा ऐसे लोगों से रक्खेंगे उतना ही उनके लिये अच्छा होगा ।

यदि किसी के विषय में यह मालूम हो कि वह कभी कुचक्री रहा है तो यह समझना चाहिए कि वह अब भी कुचक्री है। हां यदि इस बात का कोई पक्का प्रमाण मिल जाय कि वह बिलकुल सुधर गया है तो दूसरी बात है। साधारण नियम यह होना चाहिये कि राजा महाराजा उन लोगों को सदा दूर रक्खें जो कभी कुचक्री रह चुके हों।

जब कभी महाराज को ऐसे लोग जिनको महाराज अपना सच्चा हितैषी और विश्वासी सलाहकार समझते हों यह निश्चय दिलावें कि अमुक मनुष्य कुचक्री है तो महाराज की भलाई इसी में है कि उसकी बात मान लें और उस कुचक्री को दूर रक्खें। कम से कम उस पर कड़ी दृष्टि तो ज़रूर रक्खें।

ऊपर लिखी बातों पर चलने से राजा महाराजा सब कुचक्रियों से नहीं तो भी बहुतों से बचे रह सकते हैं।

अब तक जो कुछ कहा गया है वह इस विषय के लिये काफी नहीं मालूम पड़ता। इससे इस विषय को और अधिक स्पष्ट करने के लिये नीचे कुचक्रियों के लक्षण और सच्चे हितैषियों के लक्षण आमने-सामने दिये जाते हैं।

कुचक्री।	सच्चा शुभचिंतक।
(१) कुचक्री वास्तव में हितैषी नहीं होता है बल्कि अपने को हितैषी प्रकट किया करता है।	(१) सच्चा हितैषी सच्चा हितैषी है।

(२) अथवा यों कहिए कि कुचक्री एक खोटी धातु है जिसपर सोने की कलई की रहती है।

(२) सच्चा हितैषी खरा और ठोस सोना है।

(३) कुचक्री की पिछली कार्रवाईयां प्रकट करती हैं कि वह कुचक्री है।

(३) सच्चे हितैषी के पिछले काम यह प्रकट करते हैं कि वह निर्दोष है।

(४) कुचक्री को सब भले आदमी जानते हैं कि वह कुचक्री है।

(४) इसी प्रकार सच्चे हितैषी को सब भले आदमी समझते हैं कि वह सच्चा हितैषी है।

(५) कुचक्री प्रायः असंतोषी होता है और समझता है कि मेरे साथ अन्याय हुआ है और मैं बढ़ने नहीं पाता हूं।

(५) सच्चे हितैषी को कोई विशेष असन्तोष नहीं होता है, जैसे और सब लोग वैसे ही वह भी जिस दशा में रखता है प्रसन्न रहता है।

(६) कुचक्री प्रायः अपनी समझ और योग्यता को सब के ऊपर समझता है।

(६) सच्चा हितैषी जितना करता है अपने को उतना ही मानता है।

(७) कुचक्री जो कुछ करता है वह अधिकतर अपने स्वार्थ के लिये।

(७) सच्चा हितैषी सब कुछ अपने स्वार्थ ही के लिये नहीं करता।

(८) कुचक्री जो कुछ करता है वह अपने को कोई बड़ा लाभ पहुंचाने ही के अभिप्राय से करता है—जैसे रियासत में कोई ऊंचा पद पाने के लिये या ऐसी ही और बातों के लिये।

(८) सच्चा हितैषी जो कुछ करता है वह राजा और प्रजा के हित के लिये।

(९) कुचक्री घुमा फिरा कर ऐसी ही बातें करेगा जिनसे किसी प्रकार उसको लाभ पहुंचने की राह खुलती हो।

(९) सच्चा हितैषी ऐसी ही चर्चा नहीं छेड़ेगा जिसमें उसका कुछ न कुछ मतलब हो बल्कि सब तरह की बातचीतें करेगा।

(१०) कुचक्री किसी प्रबंध या कार्रवाई के दोष दिखलाने के लिये उतनी बातें नहीं करेगा जितनी लोगों के दोष दिखलाने के लिये।

(१०) सच्चा हितैषी प्रबंध और कार्रवाइयों के दोष अधिक दिखलाया करेगा, लोगों के कम।

(११) कुचक्री बुराई करने के लिये उन लोगों की बात सबसे अधिक लावेगा जो उसके लाभ में बाधक होते होंगे।

(११) सच्चा हितैषी प्रायः सब लोगों के बारे में बातचीत करेगा।

(१२) कुचक्री कभी किसी बात में ऐसे लोगों की प्रशंसा नहीं करेगा बल्कि हर तरह से उनकी निन्दा ही किया करेगा।

(१२) सच्चा हितैषी जो प्रशंसा के योग्य होगा उसकी प्रशंसा किए बिना न रहेगा। वह अधिक विवेक से काम करेगा।

(१३) ऐसे लोगों के विरुद्ध कुचक्री जो कुछ कहेगा वह ठीक ठिकाने के साथ नहीं। "वे बड़े खोटे आदमी हैं, वे विश्वासघाती हैं, वे बुराई कर करहे हैं, वे स्वार्थी हैं, वे अंग्रेज़ी सरकार के ख़ैरख़्वाह बनने के लिए राज्य का अहित कर रहे हैं, इत्यादि इत्यादि।

(१३) सच्चा हितैषी विशेष विशेष कार्य्य बतलावेगा जिनको वह बुरा समझता है। वह यदि दोष निकालेगा तो ठीक ठीक बतला देगा कि किस कारण।

(१४) कुचक्री जो बात होगी उसमें अपना कुछ न कुछ बुरा अनुमान लड़ावेगा। जैसे, यदि किसी साल मालगुज़ारी ज्यादा आई है तो वह कहेगा कि प्रजा मालगुजारी बढ़ने से त्राहि त्राहि कर रही है। यदि मालगुजारी कम

(१४) सच्चा हितैषी जो मत प्रकट करेगा वह अधिक निष्पक्ष होगा। वह इसका विचार रक्खेगा कि कमी बेशी या उलट फेर कहां उचित कारणों से है और कहां अनुचित।

आई है तो वह कहेगा कि कुप्रबन्ध के कारण राज्य की इतनी हानि हुई है। यदि ख़र्च बढ़ गया है तो वह कहेगा कि यह सब बेपरवाही और फ़ज़ूल ख़र्ची का फल है। यदि ख़र्च घट गया है तो वह कहेगा कि बात बात में कमी और कंजूसी की गई है।

(१५) कुचक्री को कुछ करते आगा पीछा नहीं। वह अपने मतलब के लिये किसी बात या मामले को और का और बतला कर इस प्रकार घुमावेगा कि सारा दोष उनके सिर पड़े जो उसके लाभ में बाधक होते हों।

(१५) सच्चा हितैषी धर्म के साथ जैसा होगा वैसा कहेगा।

(१६) कुचक्री अपना मतलब साधने के लिये सरासर झूठ तक बोलेगा पर ऐसा झूठ जो जल्दी पकड़ा न जा सके। जैसे वह अपने

(१६) सच्चा हितैषी कभी झूठ न बोलेगा सदा सच बोलेगा। यदि वह किसी कार्रवाई में दोष भी निकालेगा तो भी यदि करने वाले की

विरोधियों पर तरह तरह के झूठे अपवाद लगावे गा, उनकी नीयत बुरी बतलावेगा।

नियत अच्छी होगी तो उसकी प्रशंसा करेगा।

(१७) कुचक्री सदा अपने विरोधियों की ऐसी भूल-चूक पकड़ा करेगा जो अच्छे से अच्छे आदमियों से भी हो जाया करती हैं और उसे जानबूझ की हुई खोटाई बतलावेगा।

(१७) सच्चा हितैषी अधिक उदारता से काम लेगा। वह इस बात को समझेगा कि बड़े से बड़े आदमियों से भी भूल हो जाया करती है। वह समझेगा कि कौन बात जान बूझ कर की गई है और कौन भूल से।

(१८) कुचक्री को अँधेरे में निशाना मारना बहुत अच्छा लगता है। वह राजा महाराजों के पास अधिकतर रात को मिलने जाया करता है। वह सदा यही चाहता है कि हम महाराज से अकेले में मिलें। वह इस प्रकार कानाफूसी करता है मानो कोई बड़े भेद की बात कह रहा है, तरह तरह की बातें

(१८) सच्चा हितैषी ये सब चालें नहीं चलेगा।

फुसलाता है, प्रायम बतलाता है कि देखिएगा जो मैं कहता हूं वही होगा। वह यह जनाता है कि अपने विपक्षियों की जितनी बुराई अभी उसने बतलाई है वह कुछ नहीं है—जितनी वह जानता है उसका एक टुकड़ा भी नहीं है। वह महाराज से बार बार विनती करेगा कि जो कुछ उसने कहा है वह और किसी को मालूम न हो। और इस ढंग से महाराज को सच्ची बात का पता लगाने से रोकेगा।

(१६) जब कुचक्री को राजकाज के मामलों में अपने विरोधियों के विरुद्ध कुछ कहने सुनने को नहीं मिलता तब वह परस्पर के व्यवहार की छोटी छोटी बातों को लेकर महाराज का मन उनकी ओर से खट्टा करना चाहता है। जैसे, कभी वह कहता है कि "अमुक अधिकारी तो

(१६) सच्चा हितैषी ऐसे पतित कर्म नहीं करेगा। वह तो जहां तक होगा महाराज को यही सलाह देगा कि "ऐसी बातों की ओर क्षण भर भी कान न दीजिए। अकेले में इधर उधर के लोग जो बातें कह जांय उन्हें, चाहे वे सच्ची भी हों, न सुनिए क्यों कि किसी अफ़सर की भलाई

महाराज को कुछ समझता ही नहीं। उस अफ़सर ने उस दिन महाराज की शान में यह कहा है"–इत्यादि। यदि पूछा गया कि 'उस अफ़सर ने ऐसा कहां कहा? तो जवाब मिलेगा कि "घर पर अपने एक मित्र से कहा था" प्रश्न–क्या वह मित्र पूछने पर मुझ से सब बतलावे गा? उत्तर–"भला वह अपने मित्र से विश्वासघात करेगा?" प्रश्न–"तब तुम्हें यह सब कैसे मालूम हुआ?" उत्तर–"उस अफ़सर के एक नौकर ने उन बातों को सुन लिया"। प्रश्न–"क्या बुलाने पर मेरे सामने वह नौकर सब हाल कहेगा?" उत्तर–"वह नौकर अपने मालिक को कैसे फँसावे गा?" प्रश्न–"तब फिर तुम्हें कैसे मालूम हुआ?" उत्तर–"जब महाराज इतना

बुराई की जांच तो उसके सरकारी (राजकीय) कामों से होती है।

पूछते हैं तो सब खोल कर कहना ही पड़ता है। उस अफ़सर के नौकर और मेरे नौकर के बीच बड़ा हेल मेल है। इस प्रकार मेरे नौकर को भी मालूम हुआ और उसने मुझसे कहा"। प्रश्न—"क्या तुम्हारा नौकर मुझसे सब ज्यों का त्यों कहेगा?" उत्तर—"यह तो मैं ठीक कह नहीं सकता पर हां, यदि उसे अपने बचाव का विश्वास हो जायगा तो क्यों नहीं कहेगा?" इस पर शायद, महाराज उस कुचक्री के नौकर को बुला भेजें और उससे कहें "तुम्हारा कुछ न होगा तुम सब बातें कह दो तो तुम्हें इनाम मिलेगा।" उस को क्या? जो कुछ उसके मालिक ने सिखा पढ़ा कर भेजा था उसने कह दिया। अब तो महाराज के निकट बात प्रमाणित हो गई क्योंकि

वे साल्य (गवाही) के नियम आदि तो जानते नहीं। इस पर कुचक्री महाशय थोड़ा और रंग जमाते हैं और कहते हैं– "संयोग की बात थी इस बार मामला महाराज के सामने साबित होगया। बहुत कर के तो ऐसी बातें साबित नहीं की जा सकतीं"। यदि महाराज ऐसी कड़ी जिरह किया करेंगे तब तो बड़ी मुशकिल होगी। इससे अच्छा तो यह है कि महाराज से कोई बात कही ही न जाय।" महाराज को अंत में कहना पड़ता है "कोई हर्ज नहीं, मुझे अब निश्चय हो गया। तुम निःसंकोच जो बातें हो मुझ से कहा करो"। इस प्रकार सहारा पा कर कुचक्री महाशय बूंद पर बूंद विष उगलते जाते हैं यहां तक कि वह अफ़सर महाराज की दृष्टि से गिर

जाता है और उसके बुरे दिन आ जाते हैं।

(२०) एक और लक्षण कुचक्री मनुष्य का यह है कि वह राजा महाराजों को प्रसन्न करने के लिए सब कुछ करने को तैयार रहता है। जो मत महाराज का होगा उसके विरुद्ध कभी वह अपना मत प्रकट न करेगा। कोई तुच्छ से तुच्छ बात भी महाराज के मुंह से निकलेगी तो वह उसकी तारीफ़ में खूब वाह वाह करेगा—पर हां वह बात किसी प्रकार उनके पक्ष की न हो जिनके विरुद्ध वह सब चालें चल रहा है। वह महाराज के प्रधान मित्रों और सम्बन्धियों से मित्रता बढ़ाने के लिए अनेक ढंग रचेगा, उन्हें रुपया उधार देगा, उनके पास नज़रें भेजेगा, अधिकार पाने पर उनकी हर प्रकार से सेवा करने का वचन देगा।

(२०) सच्चा हितैषी खुशामद और चापलूसी से सदा दूर रहेगा। वह बेधड़क अपनी राय कहेगा चाहे वह महाराज की राय से मिले चाहे न मिले। वह जो कुछ करेगा अपनी मर्य्यादा का ध्यान रख कर। वह महाराज के प्रधान मित्रों और सम्बन्धियों से नम्रता का व्यवहार करेगा पर उनकी कृपा प्राप्त करने के लिए उस प्रकार के उद्योग न करेगा जिस प्रकार के कुचक्री करता है।

ऊपर लिखे लक्षणों को राजा महाराजा यदि पूरी तरह समझ लें तो बहुत अच्छा हो। मैं ने अपने बहुत दिनों के अनुभव और विचार की बातें कही हैं। इनके द्वारा वे जान सकेंगे कि कौन कुचक्री हैं और कौन सच्चा हितैषी, कौन पीतल है और कौन सोना। पर उन्हें थोड़े धैर्य्य और ध्यान के साथ परखना होगा। किसी मनुष्य के रंग ढंग, आशय, लक्ष्य और कथनों को अच्छी तरह ताड़ना होगा, उन्हें ऊपर लिखी कसौटियों पर कसना होगा। राजा महाराजों को इसका काम बहुत पड़ता है, उन्हें इस तरह के आदमियों को परखना रहता है। पहले तो यह काम थोड़ा कठिन जान पड़ेगा पर अभ्यास करने पर सुगम हो जायगा और राजा महाराजा चट पट अपनी स्वाभाविक बुद्धि से लोगों को परखने लगेंगे।

कुचक्री जो कुछ कहेगा उसकी एक पहचान यह भी है। वह या तो कहेगा कि ऐसा ऐसा मामला है या कोई राय देगा।

ऐसे इधर उधर के लोगों की राय को तो कुछ समझना ही न चाहिए। यदि राजा महाराजों को राय ही लेना है तो विश्वासपात्र और जाने बूझे आदमियों से लें।

अब रहीं वे बातें जिनका घटित होना बतलाया जाता है। ये बातें या तो सामान्य और बे ठीक ठिकाने की होंगी अथवा विशेष और पते की।

सामान्य और बिना ठीक ठिकाने की बातें तो किसी काम की नहीं, उनकी ओर तो ध्यान ही न देना चाहिए।

रह गई विशेष और पते ठिकाने की बातें। यदि ये काम की हों और सम्भव अर्थ अथवा प्रमाण के साथ हों तो राजा महाराजों को उनकी ओर कुछ ध्यान देना चाहिए।

ऊपर कही हुई बातों को अधिक स्पष्ट करने के लिए एक दृष्टान्त दिया जाता है। मान लीजिए कि कोई कुचक्री किसी महाराज से कहता है—"सोहन लाल बहुत बुरा जज है। वह घूस लेता है। उस मुक़दमे में अभी उस दिन उसने बनवारी से १०००) रु० लिए।" इन तीनों वाक्यों में से पहिले में तो एक प्रकार की राय दी गई है जिसे कुछ समझना ही न चाहिए। दूसरे वाक्य में एक सामान्य और बिना ठीक ठिकाने की बात कही गई है जो किसी अर्थ की नहीं। तीसरे वाक्य में अलबत: एक विशेष और पते ठिकाने की बात कही गई है। यदि कहनेवाला खुद गवाही देने वा गवाह बतलाने को तैयार है तो महाराज अपने मन्त्री को सब बातों की ठीक ठीक तह-क़ीक़ात कर के इत्तला करने की आज्ञा दें।

ऊपर जो दृष्टान्त दिया गया है वह बहुत ही सीधा है, और केवल समझाने के लिए है। पर इस प्रकार की बातें जो (कुचक्रियों द्वारा) कही जाती हैं वे प्राय: लम्बी चौड़ी और पेचीली होती हैं। उनकी छान बीन ऊपर लिखे उपायों से अच्छी तरह हो तब पता लगेगा कि कौन कौन सी प्रयोजनीय बातें विशेष और पते ठिकाने की हैं जिन पर ध्यान देना होगा, मैं ने कई एक कुचक्रियों को देखा है जो इस छान बीन वा परीक्षा में नहीं ठहर सके हैं।

राजा महाराजों को छान बीन का यह ढंग अच्छी तरह जान लेना चाहिए और उसे बराबर काम में लाना चाहिए, यदि वे ऐसा न करेंगे तो लम्बी चौड़ी बातों के चक्कर में आ जायगे और चालबाजों के हाथ से धोखा खायगे।

क्रोध—अच्छे से अच्छे मनुष्यों को कभी कभी क्रोध आ जाता है। और राजा महाराजों का पद ऐसा है कि नित्य उनके धैर्य्य और स्वभाव की परीक्षा हुआ करती है। राजा महाराजा राज्य में सब से बड़े आदमी होते हैं इससे बहुत थोड़े लोग ऐसे होंगे जो उनको किसी बात से रोक सकें। अंत में यह भी स्मरण रखना चाहिए कि साधारण मनुष्यों के क्रोध की अपेक्षा राजा महाराजों के क्रोध से बहुत अधिक हानि पहुंच सकती है।

इन बातों से प्रकट है कि राजाओं को क्रोध से कितना सावधान रहना चाहिए। जहां तक हो सके क्रोध को पास ही न आने दे। बार बार यत्न करने से सब बातों में शान्ति और धैर्य्य रखने की टेव पड़ जायगी।

यदि महाराज देखें कि बहुतेरा यत्न करने पर भी क्रोध उनमें बना हुआ है तो अच्छा होगा कि अपने मन में इन विचारों को लावें।

क्रोध चित्त का एक ऐसा उद्वेग है जिससे थोड़ी देर के लिए मनुष्य पागल सा हो जाता है। उस उद्वेग की अवस्था में चित्त वेग के साथ एक ही ओर को टूटता है और

उसे वे बातें नहीं सूझती जिनसे ठीक ठीक विचार किया जाता है। सारांश यह कि क्रोध में अत्यन्त अनमोल और प्रयोजनीय विचार-शक्ति मारी जाती है।

चित की ऐसी दशा में यह करना चाहिए कि जिस बात पर क्रोध उत्पन्न हुआ है उसके विषय में न कुछ करे और न कुछ कहे। उस समय महाराज उसकी चर्चा ही छोड़ दें और चित्त को किसी दूसरी ओर ले जांय। यदि सो जांय तो बड़ी ही अच्छी बात है क्यों कि उससे बहुत शान्ति आती है। यह भी न करें तो घोड़े या गाड़ी पर दूर हवा खाने निकल जांय, या कोई ऐसी पुस्तक पढ़ने लगें जिसमें मन लगे।

जिस बात से उद्वेग उत्पन्न हुआ है उससे चित को हटा लेना ही अच्छा है। यदि हो सके तो दस पांच दिनों तक उसको फिर मन में न लावें।

इस सीधी सलाह पर चलने से राजा महाराजा बहुत से अनुचित कार्य्यों और कटु वचनों से बचे रहेंगे जिनके कारण राजकाज में कठिनाइयां उपस्थित हो सकती हैं, वे अपने मित्रों और हितैषियों से हाथ धो सकते हैं और उनके विश्वासी नौकरों और कर्म्मचारियों का जी टूट सकता है।

(दूसरों से राय कैसे लेनी चाहिए-यदि राजा महाराजों को किसी की राय लेनी हो तो उन्हें पहले अपनी राय कभी न कहनी चाहिए, उसका आभास तक न देना चाहिए। यदि जिसकी राय मांगी जाती है वह महाराज की राय पूछे भी तो भी जहां तक हो सके न कहना चाहिए।

इसके दो प्रधान कारण हैं—(१) यदि महाराज की राय पहले ही बतला दी जायगी तो संभव है जिसकी राय पूछी जा रही है वह विरुद्ध वा भिन्न राय देने में आगा-पीछा करे और यदि दे भी तो दबी ज़बान से दे। पर किसी की राय लेने का मतलब तो होता है कि वह जहां तक हो सके जी खोल कर राय दे। (२) यह भी हो सकता है कि महाराज ने चट बिना दूसरों की राय जाने कोई राय बैठा ली और वह ठीक न हुई, महा-राज के योग्य यह न होगा कि वे कोई ऐसी कच्ची और बेठीक राय मुंह से निकालें जो कि उचित विचार और परामर्श के बाद छोड़ देनी पड़े।)

दृढ़ता एक ऐसा गुण है जिसका सब आदमियों में होना अच्छा है पर विशेष कर उन लोगों में जिन्हें परमेश्वर ने राजा बनाया है। यदि किसी राजा में दृढ़ता का अभाव है तो उसके लिए राजकाज सँभालना बहुतही कठिन होगा। उसकी राय कभी कुछ होगी, कभी कुछ। उसका उद्देश्य आज और होगा कल और। वह अभी कुछ और आज्ञा देगा थोड़ी देर में कुछ और।

सच्ची दृढ़ता तो बातों को अच्छी तरह परखने, अच्छी तरह विचारने, और उनसे ठीक ठीक परिणाम निका-लने से आती है। इस बात का ज्ञान कि हमने बातों को अच्छी तरह परखा है, सावधानी से विचारा है और उनसे ठीक ठीक परिणाम निकाला है चित्त को दृढ़ करता है। अब

हम समझेंगे कि ये सब क्रियाएं हम उचित रीति से कर चुके तब दृढ़ होंगे।

जिस राजा महाराजां ने स्वयं इन क्रियाओं को किया है उनका दृढ़ता रखना और दिखाना ठीक है।

पर राजा महाराजों के सामने हजारों मामले आते हैं उन सब में उन क्रियाओं को आप करना उनके लिए असम्भव है, तब क्या वे इन सब मामलों में अस्थिर-चित्त रहा करें। नहीं, यदि वे इन सब मामलों में अस्थिर-चित्त रहेंगे तो राज्य के काम बिगड़ जायगे।

इन सब मामलों में राजा महाराजों को अपने विश्वासपात्र और कर्त्तव्य-परायण मंत्रियों पर विश्वास करना चाहिए जिन्होंने स्वयं इन क्रियाओं को किया है। उन्हें ऐसे मामलों में ऐसे मंत्रियों की राय और सलाह मान लेनी चाहिए और तब उस राय और सलाह के अनुसार काम करने के लिए दृढ़ हो जाना चाहिए।

जो ऊपर कहा गया है वह एक बड़े काम का सिद्धान्त है। राजा महाराजों को इसे अच्छी तरह समझ लेना चाहिए, यदि वे इसे अच्छी तरह नहीं समझे रहेंगे और उसके अनुसार काम नहीं करेंगे तो नित्य बड़े बड़े बेढब झंझटों में फँसेंगे और उनका नाकों दम रहेगा। बहुत कम मामले ऐसे होंगे जिनमें वे आप सब बातों का पता लगा कर उन्हें इकट्ठी कर सकें, उन पर विचार कर सकें और उनके

विषय में ठीक ठीक निश्चय कर सकें। तब उन बहुत से मामलों में जिनमें वे आप इन क्रियाओं को नहीं कर सकते वे क्या करें? क्या वे अस्थिर-चित्त रहें? तब तो राज्य का सब काम ही चौपट होगा। तब क्या वे मनमाना परिणाम निकाल लें और उस पर जम जांय। तब तो राज्य का काम और भी चौपट होगा। बड़े दुबधे की बात है।

इतिहास में बहुत से ऐसे उदाहरण मिलते हैं जिनमें राजाओं के इस सिद्धान्त को न समझने और उस पर न चलने के कारण राज्य के काम चौपट हो गए हैं। जो राजा अपनी दृढ़ता के लिए प्रसिद्ध हो गए हैं वे इस सिद्धान्त को अच्छी तरह जानते थे, वे जानते थे कि किस प्रकार विश्वासी और योग्य मंत्री चुनना, उनकी जँची हुई राय या सलाह को मानना, और उस पर दृढ़ता दिखाना चाहिए।

ऊपर जो कुछ कहा गया उससे यह प्रकट है कि दृढ़ता तभी एक गुण है जब वह ठीक ठीक परिणाम निकाल चुकने के बाद दिखाई जाय। ऐसी दृढ़ता यदि राजाओं में हो तो एक अमूल्य गुण है। पर जब दृढ़ता अयथार्थ परिणाम निकालने के बाद दिखाई जायगी तब वह गुण न रहेगी, अवगुण हो जायगी। तब वह हठ के सिवाय और कुछ न कहलावेगी।

दृढ़ता और हठ में प्रधान अन्तर क्या है? दृढ़ता जिस बात में होती है वह बात ठीक परिणाम निकालने के बाद स्थिर की हुई होती है और हठ जिस बात का

होता है यह बात अयथार्थ परिणाम निकालने के बाद स्थिर की हुई होती है। प्रत्येक राजा को यह निश्चय कर लेना चाहिए कि वह दृढ़ता है, हठी नहीं है—उसके निकाले हुए परिणाम यथार्थ हैं, अयथार्थ नहीं। दृढ़ राजा बहुत भलाई कर सकता है। हठी राजा बहुत बुराई कर सकता है।

यह अन्तर ध्यान देने योग्य है—दृढ़ता और हठ में जो अन्तर है उसे सदा ध्यान में रखना चाहिए जिसमें ऐसा न हो कि राजा महाराजा हठ ही को दृढ़ता मान बैठें। दृढ़ता गुण है, हठ अवगुण—गुण और अवगुण के बीच बहुत सी बातों में समानता होती है, इससे दुर्बल चित्त के राजा कभी कभी अवगुण को गुण मान बैठते हैं। पर दृढ़ चित्त के राजा अपनी शिक्षा के बल से और मंत्रियों की चेतावनी के सहारे गुण और अवगुण में जो मुख्य भेद है उसे समझते हैं और इस बात का ध्यान रखते हैं कि हम गुण का अनुसरण करें, अवगुण का नहीं।

ऊपर लिखी बातें यह भी सूचित करती हैं कि समझदार राजा यथार्थ बातें मानने के लिए तैयार रहते हैं अर्थात् यदि प्रमाण के साथ यह दिखलाया जाय कि उनकी राय ठीक नहीं है तो वे उसे बदलने के लिए तैयार रहते हैं। पर नासमझ राजा हठी होते हैं, यथार्थ बात मानने के लिए तैयार नहीं रहते, युक्ति और प्रमाण एक नहीं सुनते और अपने बेठीक निश्चय पर जमे रहते हैं।

बुद्धिमान राजा भारी मामलों में इस बात से

अपना जी भरने के लिए कि उनके निश्चय ठीक हैं अपने विश्वासपात्र मंत्रियों की सलाह लेते हैं और उनके निश्चयों से अपने निश्चय का मिलान करते हैं। पर नासमझ राजा मंत्रियों से सलाह लेना अपनी शान के ख़िलाफ़ समझते हैं, अयथार्थ निश्चय करते हैं और उसका बुरा फल भोगते हैं।

कोई एक मनुष्य, चाहे वह कैसा ही अनुभवी और योग्य हो, यह नहीं कह सकता कि किसी राजकाज के मामले में उसने अकेले बिना किसी की सलाह लिए जो कुछ निश्चय किया है वह ठीक ही है। संभव है कि उसे बातों का ठीक पता न हो, उसने विचार में भूल की हो वा जिस अवस्था में कोई बात हुई हो उस पर ध्यान न दिया हो। किसी मामले में बात ठीक होगी एक, और झूठे निश्चय होंगे दस तरह के। इससे हर एक राजा के लिए, जो अपनी प्रजा को झूठे निश्चयों की बुराइयों से बचाना चाहता है, यह आवश्यक है कि वह ऊपर कहे हुए ढंग से अपने निश्चय की जांच कर ले।

राज्य के पुराने अनुभवी मंत्री और दीवान आदि भी यदि दूसरों से सहायता न लें तो बातों को जानने और विचारने में बड़ी भारी भारी भूलें करें। राज्य प्रबन्ध में उन्हें जो सफलता हुई है वह ऊपर लिखे सिद्धान्तों पर चलने से।

किसी झूठे वा भ्रान्त निश्चय पर जम जाना सच-मुच बहुत बुरा है। कभी कभी कोई व्यक्ति ऐसा इस लिए

करता है जिसमें लोग उसे दृढ़ समझें। पर यह सच्ची दृढ़ता नहीं है। यह झूठी दृढ़ता है। यह कोरा हठ है। लोगों को इसका पता बहुत जल्दी चल जाता है और वे उसे हठी और दंभी समझते हैं।

राजा महाराजों के लिए सब से बुद्धिमानी की बात यह है कि वे झूठे निश्चयों पर कोई काम करने से बचे रहें। उन्हें चाहिए कि अपने निकाले हुए परिणामों को मंत्रियों की सभा में प्रकट करें जिसमें उनकी जांच हो, उनपर वाद विवाद हो और उनके विषय में पक्का निश्चय हो। यह सब चुपचाप होना चाहिए, बाहर के लोगों को इसकी कुछ ख़बर न हो। लोग तो किसी कार्य्य के फल को देखते हैं। यदि फल से यह प्रकट होता है कि झूठे निश्चयों पर महाराज कोई काम नहीं करते हैं तो लोग उनको बहुत अच्छा राजा कहेंगे, वे यह न देखने जायंगे कि किन उपायों से महाराज ऐसा करते हैं।

सारांश यह है कि हर तरह से इस बात का निश्चय कर लीजिए कि आपने जो परिणाम निकाला है वह ठीक है और तब उसके अनुसार दृढ़ता से कार्य्य कीजिए। इस प्रकार की दृढ़ता से काम लेना राजाओं में बड़ा गुण है।

इस विषय को समाप्त करने के पहले दो चार बातें और इसके सम्बन्ध में कहना चहता हूं।

कोरी दृढ़ता एक कठोर गुण है। व्यवहार में उसकी कठोरता को कुछ कोमल करना पड़ेगा। राजा को

दृढ़ होने पर भी कृपालु और शीलवान् होना चाहिए। जो बात जैसी आपड़ती है उसके विषय में इस अभिप्राय-सिद्धि के लिए वैसा करना होता है। यह अभ्यास की बात है और अभ्यास बराबर ध्यान रखने से पड़ जाता है। दृढ़ता की जो कठोरता है वह इस प्रकार कम हो सकती है कि जिसे आपकी दृढ़ता से कुछ दुःख पहुंचा हो उसे आप शान्ति और धैर्य्य के साथ समझा बुझा दें। उसे यह मालूम हो जाय कि आपने जो उसकी इच्छा पूरी नहीं की है वह शील न होने के कारण नहीं बल्कि न्याय की दृष्टि से, राज्य-प्रबन्ध के सिद्धान्तों के अनुसार, तथा जैसा बराबर होता आया है उसके विचार से, या ऐसे ही और किसी कारण से विवश हो कर। उसे यह जता दिया जाय कि आपने जो किया वह आपका कर्तव्य था उसके विरुद्ध आप कर ही नहीं सकते थे। यदि आपको इतना समझाने बुझाने का अवकाश न हो तो आप किसी ऊँचे कर्मचारी को ऐसा करने की आज्ञा दे सकते हैं। दूसरा उपाय दृढ़ता की कठोरता को धीमी करने का यह है कि जिसके विरुद्ध दृढ़ता दिखाई गई हो आप उसके साथ किसी और उचित ढंग से कोई उपकार कर दें। इस बात को स्पष्ट करने के लिए एक दृष्टान्त बहुत है। मान लीजिए कि कोई कर्म्मचारी बुड्ढा और बेकाम हो गया है और इस कारण छुड़ा दिया गया है। वह आपके पास आकर बहुत कुछ कहता सुनता और गिड़गिड़ाता है। आप उसे एक बारगी दुतकार न दें। उसे समझावें कि आजकल यह कितना आवश्यक है

कि राज्य का प्रबन्ध उत्तम हो और जब तक अशक्त कर्मचारी अलग नहीं होंगे तब तक राज्य-प्रबन्ध उत्तम होगा कैसे ? इससे आप यह भी कहें कि हम सबके सब किसी न किसी दिन बुड्ढे और बेकाम हो जांयगे और हमारे स्थान पर नए लोग आवेंगे। यदि वह कर्म्मचारी इस योग्य है कि उस पर कुछ कृपा की जाय तो आप उसके लड़के को उसकी योग्यता के अनुसार किसी काम पर लगा दें। दृढ़ होकर भी दयालु और उपकारी होना बड़ी बात है।

मैं पहले ही बतला चुका हूं कि सच्ची दृढ़ता क्या है और झूठी दृढ़ता क्या है, तथा सच्ची दृढ़ता का गुण राजा महाराजों के कितने काम का है। पर संसार का व्यवहार ऐसा है कि सब जगह पूरी पूरी दृढ़ता से काम लेना अर्थात् तिल भर भी न डिगनेवाली दृढ़ता दिखाना न सम्भव ही है न अच्छा ही है। राजा महाराजों को तो और भी एक गुण को दूसरे गुणों के अधीन रखना पड़ता है। दृढ़ता ही को लीजिए, उसमें भी आगे पीछे का सोच विचार रखना पड़ता है।

मान लीजिए कि 'क' और 'ख' को एक दूसरे से बराबर काम पड़ता है। यदि किसी मामले में 'क' ने इतनी दृढ़ता ठान ली है कि हम 'ख' की एक न मानेंगे और 'ख' ने भी इतनी दृढ़ता ठान ली है कि हम 'क' की एक न मानेंगे तो उन दोनों की कैसे निभ सकती है ? मन-मोटाव होगा, अड़चनें पड़ेंगी, झगड़े की नौबत आवेगी अथवा

'क' ओर 'ख' को एक दूसरे से अलग होना पड़ेगा या और कोई भारी उपद्रव खड़ा होगा।

इससे सिद्ध हुआ कि जब जैसा आ पड़ता है उसके अनुसार कभी कभी समझ बूझ कर आदमी को कुछ ढीला भी पड़ना पड़ता है। जब एक ओर एक आदमी की दृढ़ता है ओर दूसरी ओर दूसरे आदमी की दृढ़ता है तब सुलह के साथ मिल जुल कर काम करने के लिए हर एक को दूसरे की कुछ बातें माननी पड़ती हैं ओर निपटेरे की कोई ठीक राह निकालनी पड़ती है। बुद्धिमान् राजा की बुद्धिमानी मानने मनाने की प्रवृत्ति में देखी जाती है। बहुत से राजा इस मानने मनाने की प्रवृत्ति से बहुत कुछ लाभ उठाते देखे गए हैं। इसी प्रकार बहुतेरे राजा इस प्रवृत्ति के न होने से हानि उठाते देखे गए हैं।

मानने मनाने में किसी प्रकार की हेठी वा अप्रतिष्ठा नहीं है। परस्पर के व्यवहार में समझदार लोग बराबर मानते मनाते हैं। सार्वजनिक कार्य्यों में भी बड़े बड़े लोग मान मना कर सुलह वा निपटेरे की राह निकालते हैं। राजनीति सदा तो मानने मनाने ही में है। कोई राजनीतिज्ञ यह आशा नहीं कर सकता कि सदा सब बातों में उसी की चलेगी। राजा महाराजों को इन सब बातों को अच्छी तरह समझ रखना चाहिए जिसमें ऐसा न हो कि झूठी आन में आ कर वे सुलह वा निपटेरे की बात एक न मानें ओर अपने

ऊपर बाधा वा आपत्ति लावें। राजाओं को लेना और छोड़ना दोनों पड़ता है।

किसी मामले में सुलह वा निपटेरे के लिए कहां बात रखनी चाहिए यह जब जैसा हो वैसा विचार लेना चाहिए। प्राय: यह देख लेना चाहिए कि अपना मन कहां तक बैठता है, कैसे कैसे सिद्धान्तों का हेर फेर है और जिन कारणों से दूसरे की बात मान रहे हैं वे कैसे हैं। किसी मामले में जहां तक दूसरे की बात मान लेने की आवश्यकता है उससे अधिक मानना दुर्बलता है। इसी प्रकार जहां तक मानना आवश्यक है वहां तक भी न मानना और अपने को अड़चन और संकट में डालना ना-समझी है। अपना लक्ष्य ठीक रखना चाहिए। दूसरे की बात मान लेने में हानि कितनी है और लाभ कितना है यह अच्छी तरह तोल लेना चाहिए। अगर लाभ का पल्ला भारी है तो बात मान लेनी चाहिए।

यहां पर थोड़े में यह बतला देना भी आवश्यक है कि जहां दो राज्यों के बीच मानने मनाने का मामला होता है वहां जो राज्य निर्बल होता है उसे दूसरे की बातें अधिक माननी पड़ती हैं। पर जहां सबल पक्ष अपने बल ही को सब कुछ न समझ कर युक्ति, न्याय और उदारता से भी काम लेता है वहां यह असमानता बहुत कुछ कम हो जाती है।

बिना आपस में माने मनाए लोग अपने परिवारों को दुखी करते हैं, राजनीतिज्ञ जनसमूह को दुखी करते हैं

और राजा और शासक संसार को दुखी करते हैं।

ऊपर लिखी बातों को अच्छी तरह ध्यान में रख कर जितनी दृढ़ता आवश्यक हो उतनी दृढ़ता को काम में लाना चाहिए।

राज्य के बाहर रहना—स्वास्थ्य सुधारने के लिए या यों ही जी बहलाने के लिए कभी कभी यात्रा कर लेने के सिवा किसी राजा महाराजा का व्यर्थ अपना राज्य छोड़ कर बाहर समय बिताना ठीक नहीं है। कुछ लोग महाराज से कहेंगे इस गरमी में महाराज शिमले या नैनीताल चल कर रहें तो अच्छा है। इसी प्रकार कुछ लोग आ कर कहेंगे "महाराज अब की का जाड़ा कलकत्ते में कटे"। जाड़े के दिनों की चहल पहल देखने के लिए महाराज भी शायद निकल पड़ें। पर देशी रियासतों की प्रजा को अपने महाराज का इस प्रकार बाहर रहना अच्छा नहीं लगता। वहां के लोग चाहते हैं कि महाराज उन्हीं के बीच में रहें और मालगुज़ारी के अपने अंश को जहां तक हो राज्य के भीतर ही खर्च करें। वे चाहते हैं कि महाराज बराबर उन्हीं में रह कर उनकी भलाई में लगे रहें। उनके लिए यह बुरा लगना स्वाभाविक है कि उनके राजा अपने आनन्द के लिए देश और प्रजा को छोड़ कर बाहर जायँ।

एक और बात यह है कि यूरोपियन लोगों के आने जाने की जगहों में किसी देशी रजवाड़े का अपने भारी

दल बल के साथ आना प्रायः उतना पसन्द भी नहीं किया जाता। स्थान के स्वास्थ्य और लोगों के आराम में बाधा पहुंचने की आशंका होती है। इससे कई प्रकार के बन्धन रक्खे जाते हैं जो देशी रजवाड़ों को नहीं भा सकते। हथियार और गोली बारूद ले जाने में नियमों की पाबन्दी करना पड़ती है। महाराज और उनके आदमियों आदि के टैक्स देने के सम्बन्ध में तरह तरह की बातें उठती हैं। महाराज और उनके आदमियों के साथ अंग्रेज़ी पुलिस और अदालत के व्यवहार के विषय में टेढ़े टेढ़े प्रश्न उठ खड़े होते हैं। वाजिब दाम और मज़दूरी आदि चुकाने पर भी प्रायः मुक़दमे दायर कर दिए जाते हैं।

इन सब बातों को विचार कर और देख कर कि राजा महाराजों के बाहर रहने में व्यर्थ बहुतसा खर्च बढ़ता है जिससे उनकी प्रजा को कोई लाभ नहीं, यही कहना पड़ता है कि उन्हें अपना राज्य छोड़ कर व्यर्थ बहुत बाहर नहीं रहना चाहिए।

नाम पाने का उद्योग–राजा महाराजों को प्रसिद्ध होने के लिए बहुत उतावली नहीं करनी चाहिए। अच्छे और उदार राजा प्रसिद्ध होने की अभिलाषा करना राजा महाराजों के लिये उचित और योग्य ही है। इस संसार में उत्तम प्रकृति के लोगों के लिए लोकोपकारी माने जाने से बढ़ कर और कोई सन्तोष की बात ही नहीं है। पर ऐसी ख्याति लाभ करने के लिए कुछ समय चाहिए। वह

बरसों के शुद्ध आचरण, गहरे स्वार्थ-त्याग, शान्ति और धैर्य्य पूर्वक विषयों के अध्ययन तथा लोक-हित के लिए लगातार कठिन प्रयत्न करने से मिलती है। ऐसी कीर्त्ति प्राप्त करने का कोई और सीधा मार्ग नहीं।

जो राजा महाराजा इन बातों को पूरी तरह समझते हैं वे बहुत सी स्थिर बातों में केवल नाम के लिए व्यर्थ छेड़छाड़ करने की धुन में नहीं पड़ते। वे धैर्य्य और शान्ति के सुगम मार्ग पर चलते हैं।

जो राजा बात बात में वाह वाही के भूखे रहते हैं वे दुःख उठाते हैं। संसार के अपने कामों से इतनी छुट्टी कहां कि हर घड़ी राजों की 'वाह वाह' किया करे और यह ठीक भी नहीं है कि दुनिया की वाह वाही इतनी सस्ती हो जाय कि सड़ी सड़ी बातों के लिए भी लुटा करे।

जो राजा अवसर नहीं जोहते और नाम पाने के लिए अधीर रहते हैं वे कभी कभी समाचारपत्रों में तारीफ़ छपवाते हैं। भाड़े के खुशामदी टट्टू ऐसे राजों के छोटे मोटे कामों के भी खूब लंबे चौड़े वृत्तान्त लिखते हैं और बात बात में उनकी बेसिर पैर की बुद्धिमानी और उदारता की प्रशंसा लोगों से कराना चाहते हैं। पर ज़बरदस्ती नाम पैदा करने के ऐसे ऐसे यत्नों का अन्त में कुछ भी फल नहीं होता। परखनेवालों को भाड़े के टट्टुओं की झूठी और बढ़ाई हुई बातों को ताड़ने में देर नहीं लगती।

इस लिए नए राजों के लिए सब से अच्छी सलाह यह है—बराबर दृढ़ता के साथ, बिना आडंबर या दिखावट के भलाई करते रहिए। इस प्रकार यश के अधिकारी हो जाइए और देखिए वह कब मिलता है; अन्त में वह मिले ही गा।

डेपुटेशन—राजा महाराजों को स्वयं डेपुटेशनों से मिलने में बहुत सावधान रहना चाहिए। यदि यह मालूम हो जायगा कि अमुक राजा व महाराजा डेपुटेशनों से बहुत मिलते हैं तो उनसे इतने अधिक डेपुटेशन मिलना चाहेंगे जिनका अन्त नहीं—उनकी प्रजा के भिन्न भिन्न वर्गों के डेपुटेशन, आस पास के नगरों के डेपुटेशन, दूर दूर तक की मंडलियों के डेपुटेशन, चारों ओर से डेपुटेशन ही डेपुटेशन आवेंगे। वे बड़े बड़े ऐड्रेस (अभिनन्दनपत्र) देंगे और लंबी चौड़ी स्पीचें झाड़ेंगे। कभी वे टेढ़े टेढ़े विवाद उठावेंगे और किसी विषय पर महाराज से ठीक ठीक उत्तर चाहेंगे। वे धर्म, राजनीति, कला कौशल तथा और विषयों से सम्बन्ध रखनेवाली न जाने कितनी बातों से महाराज को हैरान करेंगे। जो कुछ महाराज उनसे कहेंगे या नहीं भी कहेंगे उसकी चारों ओर कड़ी कड़ी आलोचनाएँ होंगी।

चलता हुआ नियम तो यह होना चाहिए कि साधारण डेपुटेशन जो हों वे महाराज के मंत्रियों के पास भेज दिए जांय। जैसे मान लीजिए कि कोई डेपुटेशन माल

(लगान मालगुज़ारी) के सम्बन्ध में कुछ बातें कहना चाहता है, उसे सीधे मालविभाग के अधिकारी वा मंत्री के पास जाना चाहिए।' यदि किसी डेपुटेशन को शिक्षा विभाग से सम्बन्ध रखनेवाली बात कहनी है तो उसे शिक्षा-विभाग के अधिकारी के पास जाना चाहिये। इसी तरह और भी समझना चाहिए। विभाग का अधिकारी डेपुटेशन से अच्छी तरह मिले, उसकी सब बातें सुने और जो कुछ करना हो उसे करे। कोई बड़ा मामला हो तो डेपुटेशन दीवान या प्रधान मंत्री के पास जाय। जहां डेपुटेशन की बातें काम काज की हों वहां के लिए यही सब से अच्छी और सुगम रीति है।

महाराज स्वयं डेपुटेशन से मिलना केवल तब स्वीकार करें जब डेपुटेशन, उसका विषय वा अवसर बड़े महत्त्व का हो। ऐसा संयोग कम पड़ता है। दीवान से पूछने पर मालूम हो सकता है कि कौन बात कैसी है।

जब कभी ऐसा संयोग पड़े तो भी दीवान को पहले से डेपुटेशन के विषय और उद्देश की सूचना होनी चाहिए। डेपुटेशन की ओर से जो अड्रेस वा अभिनन्दनपत्र दिया जानेवाला हो उसे दीवान को देख लेना चाहिए जिसमें वह महाराज को उसके लिए तैयार कर सके।

महाराज की ओर से डेपुटेशनों के जो उत्तर हों वे बड़ी सावधानी के साथ खूब सोच समझ कर लिखे जांय। यदि उत्तर स्पष्ट और ठीक ठीक दिया जा सकता हो तो अच्छी ही बात है। पर प्रायः ऐसा होता है कि महाराज को

ओर से तुरंत ठीक ठीक उत्तर नहीं दिया जा सकता। बात को पीछे से अच्छी तरह से विचारना रहता है। जहां यह हो वहां महाराज झटपट बिना सोचे समझे ऐसा उत्तर न दें जिससे उनकी कोई राय या कारवाई प्रकट हो। उत्तर ऐसा हो जिससे कोई आशा न बंधे और जिसमें कोई ऐसे वादे न हों जिनका पूरा करना आगे चलकर कठिन हो। सारांश यह कि ऐसे उत्तर के लिए बड़ी बुद्धि और चतुराई चाहिए। यह नहीं कि हर एक आदमी जो शुद्ध शुद्ध भाषा लिख सकता है ऐसे उत्तर तैयार करले। अच्छा तो यह होगा कि महाराज ऐसे उत्तर अपने मंत्रियों से तैयार करावें। यूरप के सम्राट् भी इसी रीति पर चलते हैं।

राजा महाराजों को किससे सलाह लेनी चाहिए–

राजकाज के मामलों में राजा महाराजों को सलाह लेने की कितनी आवश्यकता है यह मैं पहिले दिखला चुका हूं। सलाह लेने का मतलब यह है कि ठीक निश्चय पर पहुंचे जिससे राज्य का प्रबन्ध उत्तम हो।

अब प्रश्न यह उठता है कि राजा महाराजा सलाह लें तो किससे लें। यह तो ठीक नहीं कि जिस किसी से हुआ उसी से सलाह ले ली। बीसों आदमी राजा महाराजों को बात बात में सलाह देने को तैयार रहते हैं। जो सबसे मूर्ख होते हैं वे तो इस बात में सबसे आगे रहते हैं क्योंकि न उन्हें सन्देह सताते हैं, न अड़चनें सुझाई पड़ती हैं।

राजा महाराजों को मंत्रदाता या सलाहकार बहुत समझ बूझ कर चुनना चाहिए। राजा महाराजों का यह एक बहुत बड़ा और आवश्यक कर्त्तव्य है। यह उन मुख्य बातों में से है जिनके कारण इन्हें राज काज में सफलता होती है।

राजा महाराजों को समझ बूझ कर ऐसे मंत्रदाता या सलाहकार चुनने चाहिएं जिनमें ये गुण मुख्य हों—

(क) जिस कार्य्य में सलाह लेनी हो उसके तत्त्व और सिद्धान्तों की जानकारी

(ख) व्यवहार का अनुभव जिससे यह जाना जाता है कि उस जानकारी को कहां कहां किस प्रकार काम में लाना चाहिए।

(ग) सत्यप्रियता, न्यायप्रियता और स्वार्थत्याग की प्रवृत्ति जिनसे आशय उच्च होता है, नीयत अच्छी होती है।

राजा महाराजों को इन गुणों को अच्छी तरह समझ लेना चाहिए और जिनमें ये गुण हों उन्हें सलहकार चुनना चाहिए। जो राजा महाराजा ऐसा करेंगे वे संसार को यह दिखला देंगे कि उनमें योग्यता और विवेक है। इस में सन्देह नहीं कि राजा महाराजा की कीर्त्ति और सफलता बहुत कुछ अच्छे सलाहकारों के चुनाव पर निर्भर है।

तात्पर्य्य यह निकला कि राजा महाराजा को ऐसे लोगों की सलाह न लेनी चाहिए जिनमें ऊपर लिखे हुए गुण न हों। ऐसे लोगों की सलाह किसी काम की नहीं

उनसे तो उलटे हानि पहुंच सकती है । सो ऐसे लोग यदि राजा महाराजा को सलाह देने आवें, जैसा कि वे प्राय: करते हैं, तो श्रीमानों के लिए अच्छा यही होगा कि उनकी ओर विशेष ध्यान न दें । ऐसी सलाहों को सुनना तक समय नष्ट करना और सिर दुखाना है । यदि कोई राजा महाराजा ऐसे लोगों की सलाह सुनेंगे तो वे शिक्षित समाज की दृष्टि से गिर जायगे । इसके सिवाय उनके शुभचिन्तकों को भी अपने महाराज की बुद्धि का कुछ विश्वास न रहेगा । ऐसे शुभ-चिन्तक कहेंगे वा मन में समझेंगे कि-"महाराज को योग्य और अयोग्य सलाह की पहचान तो है नहीं, उनकी बुद्धि का तो कुछ ठिकाना नहीं । संयोग की बात है जिस किसी की सलाह चल जाय ।"

मैंने इस विषय को थोड़ा विस्तार के साथ कहा है क्यों कि ऐसा प्राय: हुआ है-और देशी रियासतों में तो बहुत हुआ है कि अच्छी से अच्छी और पक्की से पक्की सलाह किसी कुचक्री कारकुन, मुँहलगे नोकर, संकीर्ण-चित्त पुजारी, या चतुर गवैये की सलाह के आगे नहीं चल सकी है । इस प्रकार बहुत सी रियासतों का प्रबन्ध गड़बड़ाया है और बहुत सी रियासतें चौपट हो गई हैं ।

ऊपर लिखी बातों को अच्छी तरह समझ लेने और ध्यान में रख लेने से राजा महाराजा उन बहुत से अयोग्य सलाहकारों से अपना पिंड छुड़ा सकेंगे जो राज दरबारों में सदा अपनी राय भिड़ाने का अवसर ताका करते हैं । किसी

राजा के लिए अयोग्य सलाहकारों से छुटकारा पाना बड़ा शुभ लक्षण है।

अत: इसके पहले कि राजा महाराजा किसी व्यक्ति की सलाह लें वा मानें उन्हें अपने मन में यह प्रश्न कर लेना चाहिए—क्या उस मनुष्य को उस विषय (जिसमें राय लेनी है) के सिद्धान्त और व्यवहार का ज्ञान है और क्या वह सत्यप्रिय, न्यायप्रिय और नि:स्वार्थ है ? यदि मन में बैठे कि 'हां' तब तो वह मनुष्य योग्य सलाहकार है। यदि मन में ऐसा न बैठे तो वह मनुष्य योग्य सलाहकार नहीं है।

अब मान लीजिए किसी राजा महाराजा ने यह अच्छी तरह समझ लिया कि कैसे योग्य सलाहकार चुनना चाहिए। यदि ये योग्य सलाहकार सब के सब एकमत हों और एक ही सलाह महाराज को दें तो बहुत ही अच्छा है। पर प्रश्न यह उठता है कि यदि ये योग्य सलाहकार सहमत न हों और एक दूसरे के विरुद्ध राय दें तो महाराज क्या करें। ऐसा प्राय: हो सकता है, इस से यह जान लेना अच्छा है कि ऐसी अवस्था में क्या करना चाहिए।

यदि योग्य सलाहकार एक दूसरे से भिन्न और विरुद्ध राय दें तो इसका निर्णय करना महाराज ही के ऊपर है कि किसकी सलाह पर चलना सब से अच्छा है। यह महाराज का बहुत बड़ा काम है। इसे उन्हें बड़े विचार और सावधानी से करना चाहिए।

मैं आगे कुछ बातें बतलाता हूं जो राजा महाराजा के बड़े काम की होंगी।

सलाह चुनने में कई बातों का विचार रखना चाहिए जिनमें से मुख्य ये हैं।

किसी ज़िम्मेदार अफ़सर की सलाह के सामने किसी इधर उधर के आदमी की सलाह को न मानना चाहिए। इधर उधर का आदमी चाहे कैसा ही योग्य और विचारवान हो ठीक ठीक निर्णय करने के लिए उतना उपयुक्त नहीं हो सकता। जवाबदेही का ध्यान—अर्थात् यह ध्यान कि महाराज को कच्ची राय देने से विश्वास उठ जायगा एक ऐसा बंधक वा मुचलका है जो जिम्मेदार अफ़सर से भरसक अच्छी ही राय दिलावेगा। पर जिसके सिर कोई जवाबदेही नहीं उसके विषय में इस प्रकार की कोई पुष्टि नहीं रहती, और रहती भी है तो बहुत कम।

इस बंधक से पूरा पूरा लाभ उठाने के लिए राजा महाराजा को चाहिए कि भारी मामलों में जो सलाह उन्हें दी जाय उसे वे सलाह देनेवाले से दस्तख़ और मिति वार के सहित स्मरण-पत्र के रूप में लिखा लें। यह अनुभव की बात है कि बहुतेरे लोगों से जो ज़बानी बात चीत में यों ही बिना सोचे बिचारे कुछ न कुछ कह देते हैं जब लिख कर सम्मति देने के लिए कहा जाता है तब वे अपनी जवाबदेही का अधिक ध्यान रखते हैं। जो कुछ वे लिखते हैं वह उस

से अधिक सोचा समझा, अधिक स्पष्ट और अधिक ठीक होता है जिसे वे केवल मुंह से कहते हैं।

जिस बात में सलाह लेनी है यदि वह सिद्धान्त की बात है तो उसकी सलाह को सब के ऊपर माने जो वैसे सिद्धान्तों में निपुण हो। इसी प्रकार जिस बात में सलाह लेनी है यदि वह व्यवहार-ज्ञान की बात है तो उस आदमी की सलाह सब के ऊपर माने जो वैसे व्यवहारों में पक्का हो।

और सब बातों का विचार करके जिस सलाह को बहुत से योग्य पुरुष दें उसे उस सलाह से अधिक मानना चाहिए जिसे कम लोग दें।

सब बातों का विचार करके उस सलाह पर चलना चाहिए जिससे चलते हुए कामों में सब से कम बाधाएं पड़े।

और सब बातों का विचार करके उस सलाह को मानना चाहिए जो प्रजा की इच्छा और भावना के सब से कम विरुद्ध हो।

इसी प्रकार उस सलाह को मानना चाहिए जो पड़ोस के राज्य में विशेष कर अंग्रेजी राज्य में प्रचलित रीति के सब से अधिक मेल में हो।

इसी प्रकार उस सलाह पर चलना चाहिए जिसे आप समझें कि राज्य की भलाई के लिए अंग्रेजी सरकार भी अधिक पसंद करेगी॥

कहां किस प्रकार और किस सलाह पर चलना चाहिए इसका निर्णय करने के लिए ऊपर लिखी बातें बड़े काम की हैं।

सब से उलझन वहां पड़ेगी जहां ऊपर लिखी सब बातों का विचार करने से कोई एक राह न सूझेगी अर्थात् कुछ बातों का विचार करने से मन में बैठेगा कि ऐसा करना चाहिए और कुछ बातों का विचार करने से यह ठहरेगा कि ऐसा नहीं ऐसा करना चाहिए। ऐसी दशा में पक्ष और विपक्ष की बातों को अच्छी तरह तोलना चाहिए और पल्ला देख कर निश्चय करना चाहिए।

पक्ष और विपक्ष की बातों को किस तरह तोलना चाहिए और पल्ला किस तरह आंकना चाहिए ठीक ठीक बतलाना कठिन है। यह अभ्यास और परख की बात है।

राजा महाराजों को ठीक ठीक निर्णय करने में बहुत कुछ सुबीता हो सकता है यदि वे भिन्न भिन्न मत देने वाले अपने सलाहकारों को अपने सामने आपस में बाद विवाद करने दें और स्वयं भी उस विवाद में सम्मिलित हों तथा ऊपर जिन बातों का विचार रखने के लिए कहा गया है उसके सम्बन्ध में पूछ पाछ करें। इस विवाद का फल यह होगा जिन बातों में परस्पर भेद पड़ता होगा वे ते हो जांयगी और सब लोग एक परिणाम पर पहुंच जांयगे।

यदि सब लोग एक परिणाम पर न पहुंचे और महाराज देखें कि ऊपर कही सब बातों को तोल कर ठीक ठीक पल्ला नहीं आंक सकते तो सब से अच्छा होगा कि यदि सम्भव हो तो महाराज उस विषय को फिर किसी समय सोचने और विचारने के लिए टाल रक्खें। आगे चल कर कोई ठीक राह निकल ही आवेगी।

यदि उस विषय का टालना सम्भव न हो और उसी समय निर्णय की आवश्यकता हो तो राजा महाराजों के लिए सब से अच्छा यह होगा कि वे अपने प्रधान मंत्री की सलाह को सब के ऊपर मानें और उसी पर चलें।

काम का बोझ—राजा महाराजों को अपने ऊपर बहुत अधिक कामों का बोझ नहीं लेना चाहिए। उन्हे इतना काम न उठाना चाहिए कि उनके स्वास्थ्य को हानि पहुंचे। उन्हें आराम के लिए पूरा समय न मिले और काम भी उतनी समझ बूझ और सोच विचार के साथ न हो।

राजा महाराजों को यह याद रखना चाहिए कि उन्हें जीवन भर काम ही करना है, कुछ दिन खूब परिश्रम करके फिर चुपचाप बैठ नहीं रहना है। इस से काम भी एक हिसाब से करना चाहिए।

मोटे तौर पर राजा महाराजों को प्रति दिन चार पांच घंटों से अधिक काम नहीं करना चाहिए। इससे उन्हें

उन्हें स्वास्थ्य सुधारने, आराम करने, पढ़ने लिखने, परिवार को देख भाल करने, इष्ट मित्रों से मिलने तथा सुख और आनन्द के लिए समय रहेगा। जब कोई और ऊपर का काम आजाय तब महाराज कुछ अधिक समय अवश्य लगावें।

बहुत से छोटे ब्योरों को तो राजा महाराजों को अपने प्रधान मंत्री के ऊपर छोड़ देना चाहिए। उनके सम्बन्ध में एक एक मामले में अलग अलग ब्योरेवार आज्ञा देने से अच्छा यह होगा कि महाराज एक सामान्य आज्ञा दे दें जो एकही प्रकार के बहुत से मामलों पर घटे। इस युक्ति से बहुत सा समय और श्रम बचेगा। सिद्धान्त यह है कि महाराज बहुत से ऐसे कामों का बोझ अपने ऊपर न उठालें जिन्हें और लोग भी अच्छी तरह कर सकते हैं। महाराज एक इंजीनियर के समान हैं। इंजीनियर को आप इंजिन के कल पुरजों को नहीं चलाना पड़ता। इंजीनियर जितना ही अधिक दक्ष होगा उतना ही वह इंजिन से अधिक काम लेने का प्रबन्ध करेगा और अपने लिए बहुत सा समय देख भाल और सुधार करने के लिए निकालेगा।

काम काज—राजा महाराजों को अपना स्वास्थ्य और बुद्धि ठिकाने रखने के लिए यह बहुत आवश्यक है कि वे व्यर्थ के झंझटों से अपने को बचाए रहें। यदि वे इस बात का ध्यान नहीं रक्खेंगे तो बहुत माथापच्ची करनी पड़ेगी।

न जाने कितने लोग तरह तरह की प्रार्थनाएं

लेकर महाराज के पास पहुंचेंगे और कुछ न कुछ चाहेंगे। उनमें से मुख्य ये होंगी—

(क) नौकरी, तरक्की, वेतनवृद्धि और एक स्थान से दूसरे स्थान पर बदली के लिए प्रार्थनाएं।

(ख) मुआफ़ी ज़मीन के लिए प्रार्थनाएं।

(ग) व्याह शादी के लिए पोशाक, गहने और रुपए पैसे की याचना।

(घ) सीधे के लिए प्रार्थना।

(च) गाड़ी घोड़ा, सवार आदि मँगनी पाने की प्रार्थना।

(छ) उधार और पेशगी आदि के लिए प्रार्थना।

(ज) जो बातें ते हो चुकी हैं उन्हें रद्द करने, बदलने वा फिर से विचारने की प्रार्थना।

(झ) धर्म्मार्थ दान और चंदे के लिए प्रार्थना, इत्यादि इत्यादि।

इस प्रकार के बहुत से झंझटों से राजा महाराजा दो चार सिद्धान्तों का ध्यान रखने से बच सकते हैं। वे यहां संक्षेप में कहे जाते हैं।

उन मामलों में, जिनके विषय में सब कार्रवाई करने का अधिकार महाराज ने भिन्न भिन्न विभागों के अधिकारियों को दे रक्खा है, महाराज को हाथ न डालना चाहिए। यही उचित और योग्य है।

बहुत से मामलों में महाराज प्रार्थी से कह सकते हैं कि जिस विभाग से सम्बन्ध है उसके अधिकारी द्वारा प्रार्थना करो।

बहुत से मामलों में महाराज कहें कि हम व्यय की वर्तमान सीमा को बढ़ा नहीं सकते, क्यों कि यह बहुत आवश्यक है कि आय से व्यय कम रहे।

बहुत से मामलों में पुराने दाखलों के हवाले पर चलना चाहिए।

कुछ मामलों में इस सिद्धान्त को बर्ते कि जिस बात पर एक बार विचार और निश्चय हो चुका उस पर फिर, जब तक कोई नया और बहुत ही आवश्यक कारण न दिखाया जाय, विचार नहीं हो सकता।

निर्णय या विवेक—जो लोग ऊंचे पद पर हैं और बड़े बड़े अधिकार रखते हैं, विशेष कर जो राजा हैं, उन्हें सदा निर्णय का अभ्यास रखना चाहिए। यह एक पक्ष के कारणों को एक ओर और दूसरे पक्ष के कारणों को दूसरी ओर रखकर तोलने और पल्ला आंकने का अभ्यास है। यह अभ्यास बहुत ही आवश्यक और उपयोगी है और यत्न करने से प्राप्त होता है।

जब बहुत सी बातों में से किसी एक बात को चुनना हो तो चुनाव मनमाना नहीं होना चाहिए। चुनाव किसी अच्छे कारण से होना चाहिए। बड़े और छोटे सब मामलों में यही सिद्धान्त रखना चाहिए। सारांश यह कि चाहे कोई बात हो बुद्धि को ऊपर रखना चाहिए।

जो राजा बुद्धि के अनुसार चलता है उसका मार्ग सदा निष्कंटक रहता है।

यदि कोई किसी राजा से कहे कि ऐसा कीजिए तो उससे उसका कारण पूछना चाहिए।

सब बातें बुद्धि के अनुसार करने से राजा की पुष्टि रहेगी, क्यों कि सब बुद्धिमान् उनका पक्ष लेंगे। प्रजा और सर्वसाधारण की भी सहानुभूति और सहायता रहेगी।

सच तो यह है कि यह निर्णय वा विवेक ही की शक्ति है जिसके कारण एक आदमी कुछ और होता है दूसरा कुछ और। यदि दो आदमी सामान्य दशा में रक्खे जाँय तो वह आदमी अधिक सफलता प्राप्त करेगा जिसमें विवेक अधिक होगा।

पर निर्णय शक्ति वा विवेक किसी को जन्म से नहीं होता। इसको धैर्य्य के साथ अभ्यास द्वारा प्राप्त करना पड़ता है। उसको ठीक ठीक काम में लाने के लिए पक्के सिद्धान्तों की भरपूर जानकारी चाहिए। यह भी देखना चाहिए कि बड़े बड़े प्रसिद्ध पुरुष कठिन और उलझन के मामलों में किस प्रकार निर्णय करते हैं। इस बात की जानकारी के लिए नित्य कुछ पुस्तकें पढ़ी जांय तो अच्छा है।

पूरा पूरा विचार-यदि राजा महाराजों के पास आज्ञा के लिए कोई बात आवे तो उन्हें यह देख लेना चाहिए कि उसका प्रभाव

(क) उन पर,

(ख) उनकी प्रजा पर,

(ग) और राज्यों की प्रजा पर,

(घ) अंगरेजी सरकार पर,

(च) सर्व साधारण पर तथा

(छ) आगे आने वाली उसी प्रकार की और बातों पर। कैसा पड़ेगा।

भारी भारी मामलों में इन्हीं छः बातों को अच्छी तरह देखना चाहिए।

किसी कार्रवाई की भलाई बुराई समझने के लिए यह भी देख लेना चाहिए कि यदि और लोग भी वैसी ही कार्रवाई करें तो वह हमें कैसी लगेगी। इस में यह सिद्धान्त रक्खा गया है कि तुम दूसरे लोगों के साथ वैसाही करो जैसा कि तुम चाहते हो कि वे तुम्हारे साथ करें।

मेरे कहने का तात्पर्य्य यह है कि किसी कार्रवाई का प्रभाव किन किन बातों पर कैसा पड़ेगा यह अच्छी तरह देख लेना चाहिए। इसके देखने में वर्तमान का भी ध्यान रखना चाहिए और भविष्य का भी।

प्रस्तावों के परिवर्तन की प्रवृत्ति—बहुत से राजा महाराजों को जो प्रस्ताव उनके सामने लाया जाता है उसमें कुछ न कुछ फेरफार करने का बड़ा चाव रहता है—चाहे फेर-फार की कोई आवश्यकता हो, चाहे न हो। इस प्रवृत्ति से अपने को बचाना चाहिए। इस प्रवृत्ति से काम में रुकावट पड़ सकती है।

इस प्रवृत्ति का मूल है अहंकार । इस प्रवृत्ति वाला मनुष्य समझता है कि यदि हम अपने सामने आए हुए प्रस्ताव में कुछ अदल बदल करेंगे तो हमारा बड़प्पन रहेगा। पर यह भूल है। अदल बदल करने ही में बुद्धिमानी नहीं है। अदल बदल का जब कोई ठीक कारण होगा तभी बड़प्पन और बुद्धिमानी समझी जायगी। जहां बिना किसी ठीक कारण के केवल छोटाई बड़ाई के ख्याल से अदल बदल किया जाता है वहां केवल चित्त की दुर्बलता सूचित होती है। लोग इस दुर्बलता को झट भाप जाते हैं। वे असल और नक़ल की पहचान कर लेते हैं।

राजा महाराजा उपस्थित प्रस्ताव की जहां तक जांच करते बने करें। उन पर विवाद भी करें। जो बात अयुक्त हो उसे कहें और पूछ पाछ करें। यदि यह मन में बैठ जाय कि इन कारणों से अदल बदल करना आवश्यक है तो अदल बदल करें। पर यों ही केवल अधिकार और बड़प्पन जताने के उद्देश से अदल बदल करना बड़ी बुरी बात है।

मैंने देखा है कि चापलूस लोग जिनसे शायद ही कोई राज दरबार बचा हो इस प्रवृत्ति को बढ़ावा देकर उभाड़ते हैं। पर इन लोगों के फेर में पड़ना मानो अपने को भूल कर अपनी हानि आप करना है।

बात के ठीक जंचने पर और कर्म्मचारियों पर इतना विश्वास होने पर कि उनके हाथ में सब ब्योरा ठीक रहेगा जो राजा महाराजा दृढ़चित्त होकर कहते हैं कि "मैं

सहमत हूं" वे काम को बड़ा सुगम कर देते हैं। यही एक उपाय है जिससे काम में अड़चन नहीं पड़ सकती और राजा महाराजों को भी ध्यान देने योग्य भारी भारी मामलों को निपटाने का पूरा अवकाश मिल सकता है।

साध्य और साधन—किसी काम को अच्छी तरह और सफलता पूर्वक करने के लिए पहले यह साफ़ साफ़ समझ लेना ज़रूरी है कि वह उद्देश क्या है जिसे पूरा करना है और विशेष लक्ष्य क्या है और क्या नहीं है।

यह हो जाने पर दूसरा विचार साधन वा उपाय का करना चाहिए। एक उद्देश की सिद्धि के अनेक साधन वा उपाय हो सकते हैं। इन में से कौन सब से अच्छा है इसका निश्चय जितनी सावधानी से हो सके कर लीजिए।

सब से अच्छा उपाय ठहरा लेने पर उन सब कठिनाइयों और आपत्तियों को सोचिए जो उद्देश में बाधा डाल सकती हैं वा उसे निष्फल कर सकती हैं और उन कठिनाइयों और आपत्तियों को दूर करने का उपाय कीजिए वा सोचे रहिए।

तब देश, काल और अवस्था का विचार करके काम को कर चलिए।

यदि इस ढंग से कोई चलेगा तो सफलता का विस्तार बढ़ जायगा अर्थात् बहुत सी बातों में सफलता होगी।

यद्यपि ऊपर बताया हुआ ढंग बहुत सीधा है पर बहुत से लोग उस पर नहीं चलते और चलते भी हैं तो

पूरी तरह नहीं। ऊपर लिखे ढंग पर कोई कम चलता है कोई अधिक, इसी से जीवन में किसी को कम सफलता होती है किसी को अधिक।

जो मनुष्य इस ढंग या युक्ति का पूरा पूरा ध्यान रखता है वह कभी चक्कर में नहीं पड़ता। वह तो पहले से सोच समझ कर ठहराई हुई शैली पर बराबर चला चलता है। पर जो मनुष्य कोई काम उठाने में इसका ध्यान नहीं रखता वह बिना ठीक ठिकाने के चलता है और पग पग पर घबड़ाता और अधीर होता है।

जो बातें मैंने कही हैं वे सब पर घटती हैं पर राजा महाराजों पर विशेष रूप से, जिन्हें बराबर कुछ न कुछ करना रहता है और जिन्हे प्राय: बड़े बड़े मामलों में कारंवाई करनी रहती है।

कर्मचारियों के साथ व्यवहार—जब कि एक बार कर्मचारी पूरी सावधानी के साथ योग्यता देखकर चुने गए तब फिर महाराज को उन पर विश्वास रखना चाहिए। महाराज का यह सन्देह करना न्याय और नीति के विरुद्ध होगा कि वे ठीक ठीक बातें नहीं बतलाया करते या अंडबंड कारंवाई कराया करते हैं। जिन राजा, महाराजों ने यह नहीं सीखा है कि दूसरों पर किस तरह विश्वास रखना चाहिए वे अपने जीवन में कुछ नहीं कर सकते क्योंकि कोई खुशी से उनका साथ देने वाला नहीं मिलता।

राजा महाराजों को चाहिए कि अपने उच्च कर्म्म-चारियों के साथ शिष्टता और मान का व्यवहार करके उनकी मर्य्यादा की रक्षा और पुष्टि करें।

संसार में ऐसे मनुष्य नहीं मिल सकते जो सब गुणों में पूरे हों। योग्य से योग्य मनुष्य में भी कोई न कोई कसर रहती ही है। राजाओं को इस प्रत्यक्ष बात का ध्यान उदारता पूर्वक रखना चाहिए। मनुष्य की सब बातों को देखे और "करे दोष को कुछ अनदेख, गुण पर रीझै सदा विसेख"॥

बड़े बड़े अफ़सरों को मामलों पर बेधड़क बाद विवाद करने और अपना मतभेद प्रकट करने का पूरा अधिकार रहना चाहिए।

राजा महाराजों से जहां तक हो सके किसी बड़े अफ़सर की पीठ पीछे बुराई न करें। किसी अफ़सर के विरुद्ध जहां कोई बात महाराज के मुंह से निकली कि वह चट दूर तक फैला दी जायगी, फिर लोग उस अफ़सर को कुछ न समझेंगे और वह अपना काम अच्छी तरह से नहीं कर सकेगा।

इन्हीं सब बातों का ध्यान रख कर इधर उधर के साधारण मनुष्यों को, जो राज दरबारों में पहुंचा करते हैं बड़े बड़े अफ़सरों के विषय में मनमाना अण्डबण्ड न बकने देना चाहिए।

ऐसे प्रार्थनापत्र भी न लेने चाहिएं जिन में बड़े अफ़सरों के प्रति व्यर्थ अपमान-सूचक शब्द लाए गए हों।

यदि महाराज को किसी बड़े अफ़सर को कुछ बुरा भला कहना हो तो अच्छा यह होगा कि एकान्त में कहें, दस आदमियों के सामने नहीं।

सारांश यह कि देश भर यह देखे कि महाराज और उनके कर्मचारी मिलजुल कर एक गहरा गुट्ट बनाए हैं और उनमें वह शक्ति पूरी पूरी है जो उद्देशों, भावों और कर्म्मों की एकता से होती है।

मैं यह कह चुका हूं कि राजा महाराजा बहुत अधिक काम न करें। राजा महाराजों को यह भी देखना चाहिए कि उनके उच्च कर्म्मचारी काम से बहुत अधिक नहीं दबे हैं और उन्हें थोड़ा बहुत विश्राम करने, पढ़ने लिखने और स्वास्थ्य सुधारने का समय मिलता है। यदि उनका इतना ख्याल रक्खा जायगा तो वे काम भी और अच्छा करेंगे।

विश्वास—विश्वास का बना रहना सार्वजनिक कार्य्यों के लिए अत्यन्त आवश्यक है। सार्वजनिक कार्य्यों के लिए तो वह जितना आवश्यक है उतना निज के कामों में भी नहीं। साधारणत: यह कहा जा सकता है कि किसी उत्तम गुण का होना राज्य के लिए उससे अधिक आवश्यक है जितना कि वह व्यक्ति के लिए है, क्योंकि राज्य की ओर से जो कार्य्य होते हैं उनका प्रभाव बहुत दूर तक पड़ता है।

विश्वास बनाए रखने के लिए यह आवश्यक है कि जो प्रतिज्ञा या वादा किया जाय वह पूरा करने की इच्छा से, और वह पूरा किया जाय।

खेद है कि बहुत सी देशी रियासतों में इस सिद्धान्त का ध्यान नहीं रक्खा जाता। फल क्या होता है ? देशी रियासतों की ओर से जो वादे किए जाते हैं उन पर कोई पूरा विश्वास नहीं करता, चाहे वे वादे कैसे ही पक्के क्यों न हों।

इस बात में अङ्गरेज सरकार और देशी रियासतों में क्या अन्तर है वह एक दृष्टान्त दे कर दिखाया जा सकता है। मान लीजिए कि किसी देशी रियासत ने उधार लेने की घोषणा की अर्थात् उसने सर्वसाधारण से कुछ रुपया उधार लेना चाहा। अब मान लीजिए कि अङ्गरेज सरकार ने भी रुपए उधार लेने की घोषणा दी। यह निश्चय है कि जिस धड़ाके के साथ लोग अङ्गरेज़ सरकार को रुपया देने दौड़ेंगे उस धड़ाके के साथ देशी रियासत को नहीं। देशी रियासत चाहे सूद भी अधिक देती हो पर लोग कम सूद पर अङ्गरेज़ सरकार को रुपया देना पसंद करेंगे। यह भेद भाव क्यों है ? इस लिए कि लोग समझते हैं कि अङ्गरेज़ सरकार अपने वादे अच्छी तरह पूरा करेगी पर किसी देशी रियासत के विषय में उन्हें इतना अधिक निश्चय नहीं रहता।

सर्वसाधारण के आराम, रक्षा और विश्वास तथा उन्नति और सुख के लिए यह आवश्यक है कि राजा महाराजा किसी मनुष्य वा किसी समाज से जो वादे करें उन्हें वे पूरा करें।

पर इसके लिए यह आवश्यक है कि जो वादे किए जांय बिना समझे बूझे नहीं। कोई वादा करने के पहले पूरी

जांच पड़ताल और पूरा सोच विचार कर लिया जाय।

इनाम—राजा महाराजों को न तो एक बारगी बिना समझे बूझे और बेहिसाब इनाम देना चाहिए और न इनाम देने में बहुत सोच विचार और कन्जूसी करनी चाहिए। उन्हें न्यायी और उदार होना चाहिए। ऐसा करना लोक धर्म है और इससे लोकहित की वृद्धि होती है।

इनाम या तो धन के रूप में होता है, वा मान और प्रतिष्ठा के रूप में होता है अथवा दोनों रूपों में होता है। इनाम का उद्देश है सुख पहुंचाना और अच्छे कामों के लिए उत्साह उत्पन्न करना। इससे इनाम देने वाले को इस बात का ध्यान रखना चाहिए कि यह उद्देश पूरा हो अर्थात् इनाम जो दिया जाय वह सुख पहुंचाने भर को हो और वह इस तरह सोच समझ कर दिया कि उससे अच्छे काम के लिए उत्साह मिले।

किसी नौकर या कर्मचारी को जो मामूली तनख़ाह मिलती है वह मामूली काम के लिए है ही, इससे उसके लिए उसे कोई खास इनाम देने की जरूरत नहीं। मामूली काम के लिए ऊपर से कुछ इनाम देने से उलटी बुराई हो सकती है। इनाम इकराम की बात तो तब उठनी चाहिए जब नित्य के मामूली काम से बढ़ कर कोई काम किया जाय।

अस्तु, जहां किसी प्रकार की सेवा न की गई हो या यों ही कोई छोटी मोटी सेवा की गई हो वहां पुरस्कार न देना चाहिए। यह मैं इस लिए कहता हूं कि राज दरबारों में ऐसे

बहुत से लोग मिलते हैं जो लम्बा चौड़ा इनाम केवल इस लिए चाहते हैं कि उनके सिर बहुत सा कर्ज है अथवा वे पुराने खानदान के हैं, इत्यादि इत्यादि ।

बड़ाई और प्रशंसा करना भी एक प्रकार का पुरस्कार ही देना है । ऐसे पुरस्कारों के विषय में भी ऊपर लिखी बातों का ध्यान रखना चाहिये । ऐसा पुरस्कार भी भरपूर क्या कुछ अधिक ही होना चाहिए ।

किसी इनाम के भरपूर वा बढ़ चढ़ कर होने की एक अच्छा पहचान यह है कि ऐसा इनाम पानेवाला अपने इनाम को औरों को दिखाने में लज्जित नहीं होता बल्कि प्रसन्नता और अभिमान के साथ उसे दिखाता फिरता है । इस तरह जब इनाम दिया जाता है तभी उससे उत्साह मिलता है और उसका उद्देश पूरा होता है ।

जो राजा समझ बूझ कर इनाम देते हैं उन से बहुत कुछ भलाई की राह निकल सकती है ।

दूसरों के जी को भी जी समझना—प्रत्येक राजा क्या प्रत्येक पुरुष को जिसे बहुत से आदमियों से काम पड़ता हो दूसरों के जी का भी ध्यान रखना चाहिए । किसी मामले में चाहे वह छोटा हो या बड़ा न तो व्यर्थ कोई कड़ी वा जी दुखाने वाली बात कहनी चाहिए और न कारवाई करनी चाहिए । यह बड़ी अच्छी बात है और इसे डालने में जो कष्ट हो उठाना चाहिए । परख और अभ्यास से यह बात पड़ती है ।

यह जानने का कि कौन सी बात कड़ी, वा जी दुखाने वाली है, एक सीधा ढंग यह है कि मनुष्य सोच कर देखे कि यदि वही बात हमें कही जायगी वा हमारे साथ की जायगी तो हमें कैसा लगेगा। बहुत से लोग इस सिद्धान्त पर अच्छी तरह नहीं चलते।

दूसरा उपाय इस बात के डालने का यह है कि जो लोग इस गुण के लिए प्रसिद्ध हों उनके विचारों, बचनों और कर्मों की ओर ध्यान दे।

सम्वादपत्रों की सम्मति-कोई राय समाचारपत्रों में छपी है उससे यह न समझ लेना चाहिए कि वह ठीक ही है। प्रकाशित मत का मोल तो समाचार पत्र और लेखक की प्रतिष्ठा पर है। पर कभी कभी ये दोनों बहुत उच्च श्रेणी के नहीं होते। कभी कभी बहुत ही कम जानकारी और समझ के आदमी अखबारों में लिखने बैठ जाते हैं। कभी कभी तो बहुत सी ओछी प्रवृति के लोग ऐसा करते हैं। कभी कभी तटस्थ निरीक्षक वा समालोचक के रूप में ऐसे लोग सामयिक पत्रों में लिखते हैं जो समझते हैं कि हमारे साथ अन्याय वा कुव्यवहार हुआ है अर्थात् ऐसे लोगों की भी कमी नहीं है जिनकी राय पैसे की है, अर्थात् जो जैसा पावेगा वह वैसा गावेगा।

ऐसी दशा में इस बात के समझने में बहुत सावधान रहना चाहिए कि समाचारपत्रों की सम्मतियां वा समालोचनायें कहां तक ध्यान देने योग्य हैं।

जो सम्बादपत्र ईमानदारी से चलाए जाते हैं और जो सर्व साधारण की सम्मति का पता देते हैं अथवा जिन में बड़े बड़े बुद्धिमानों के विचार निकलते हैं उनका तिरस्कार न करना चाहिए। उन्हें तो जहां तक होसके ध्यान दे कर पढ़ना चाहिये जिसमें राज्य प्रबन्ध में सहायता मिले।

स्वाध्याय—अधिकार मिलने पर राजा महाराजों का पढ़ना न छूटना चाहिए। यह बहुत आवश्यक है कि उन का पढ़ना किसी नियत ढर्रे पर चला चले। राजा महाराजों को बहुत सा समय और ध्यान तो राजकाज की बातों में ही लगाना पड़ेगा। पर स्वाध्याय के लिए भी कुछ समय निकालना ही चाहिए, और नहीं तो दिन में तीन ही घंटे सही।

इस से यह होगा कि उनका (क) अंगरेज़ी भाषा की और (ख) उपयोगी बातों की जानकारी बढ़ेगी।

अंगरेजी हम लोगों के लिए एक विदेशी भाषा है और यों भी कठिन है, इससे हम लोगों को उसका बराबर अभ्यास रखना पड़ता है। यदि अभ्यास न रक्खें तो उन्नति करना तो दूर रहा सीखा सिखाया भी भूल जांय। हम लोगों को बहुत सी अच्छी अंगरेज़ी नित्य पढ़नी चाहिए। हमें नित्य थोड़ी बहुत अंगरेजी लिखनी और बोलनी चाहिए।

अंगरेज़ी भाषा जानने का मुख्य उद्देश उपयोगी बातों की जानकारी प्राप्त करना है। इससे जो कुछ हम पढ़ें वह ऐसा हो जिसके द्वारा हम अपने ज्ञान का भांडार बढ़ा सकें।

जो समाचार पत्र योग्यता पूर्वक चलाए जाते हों उन्हें पढ़ना चाहिए। राजा महाराजों को संसार के विशेष कर भारत और इंगलैंड के वर्त्तमान चलते हुए इतिहास को देखते चलना चाहिए। तात्पर्य्य यह कि बड़ी बड़ी बातें जानने को रह न जायं।

मि० ग्लेडस्टोन ऐसे बड़े बड़े राजनीतिज्ञों के व्याख्यानों को पढ़ने से भी बहुत कुछ लाभ हो सकता है।

पार्लामेंट के वाद विवाद पढ़ने का भी अच्छा फल होगा।

देशी रियासतों के सम्बन्ध में जहां जितनी बातें मिलें सब को पढ़ना और नोट करना चाहिए। बड़े लाट की स्पीचें जो इस सम्बन्ध में हों वे तो किसी तरह न छूटने पावें।

हिन्दुस्तान से सम्बन्ध रखनेवाले पार्लामेंट के काग़ज़ों (Blue Books) को बराबर मंगाना चाहिए और उनके जो अंश काम के हों उन्हें पढ़ना चाहिए।

प्रान्तिक गवर्न्मेंट के वार्षिक शासन विवरणों से राजा महाराजों को परिचित रहना चाहिए।

इस प्रकार की पढ़ाई राजा महाराजों को राजकाज में बहुत काम देगी। इससे उन्हें राज्य सँभालने का शक्ति आवेगी।

राजों को ऐसी चीज़ें पढ़नी चाहिएं जिन से उनके हृदय में महत् विचारों और ऊंचे भावों का समागम हो और महल के तुच्छ और साधारण आदमियों की संगत का ओछा

प्रभाव दूर हो। देशी रजवाड़े कभी कभी ऐसी ही संगत में पड़ जाते हैं जिससे उनके विचार छोटे वा संकुचित हो जाते हैं। वे अपने को उसी पुरानी दुनिया के भीतर बंद रखते हैं जिस में वर्तमान उन्नति के युग का प्रकाश नहीं पहुंचता। इस की सब से अच्छी दवा यह है कि वे मनुष्य जाति में सब से अधिक सभ्य और शिक्षित लोगों के विचारों से जानकार हो जांय।

राजा महाराजा कभी कभी जीवनचरित और उपन्यास आदि भी पढ़ें जिनसे श्रेष्ठ गुणों की उत्तेजना मिलती है।

ऊंचा पद पा कर और बड़ा अधिकार हाथ में रख कर जीवन का लक्ष्य वा आदर्श ऊंचा रखने के लिए सतोगुण की शक्ति चाहिए और उस सतोगुण की शक्ति के लिए यह आवश्यक है कि वह बराबर किसी न किसी ढंग से नई और ताज़ी होती रहे।

मनुष्यों पर शासन करने के लिए केवल सिद्धान्तों ही के ज्ञान से काम नहीं चलता। ऐसे ज्ञान के साथ बराबर अभ्यास और अनुभव भी चाहिए। यह नहीं कि राजा महाराजा व्यवहार ज्ञान और अनुभव को कोई चीज़ ही न गिनें और बड़े बड़े मामलों में अनुभवी लोगों की राय लेना आवश्यक ही न समझें। मैं एक दृष्टान्त देता हूं जिससे सिद्धान्त और व्यवहार में जो अन्तर है वह मन में बैठ जायगा। आप दाहने हाथ से लिखना अच्छी तरह जानते हैं। यदि सिद्धान्त ही तक बात

है तो उसमें दाहिने और बाएं का कुछ विचार नहीं है। पर ज़रा बाएं हाथ से लिख कर देखिए तो कैसा अटपटांग लिखा जाता है। क्यों? बात यह है कि सिद्धान्त तो दोनों हाथों के विषय में ठीक है पर दाहिने हाथ को अभ्यास है और बाएं को नहीं। अभ्यास के अभाव से जो अन्तर पड़ जाता है वह देखिए और अकेले सिद्धान्त ज्ञान ही के आसरे पर न रहिए।

जो सिद्धान्त मैंने ठहराए हैं और जो व्यवस्थाएं मैंने बतलाई हैं वे ध्यान में रखने योग्य हैं। सभ्य और सुशिक्षित राजा महाराजा उन्हीं के अनुसार चलते हैं। उन्हीं के द्वारा वे सुख, मान और यश के शिखर पर पहुंचते हैं। उन्हीं के द्वारा देशी रजवाड़े अपनी वर्तमान् स्वतंत्रता बराबर स्थिर रख सकते हैं। मैं अपनी बातों के पक्ष में यहां पर उन वाक्यों को उद्धृत करता हूं जो १८०६ में अङ्गरेज़ी सरकार की ओर से कहे गए थे।

"जिस नीति का व्यवहार अङ्गरेज़ी राज्य में होता है उसको समझ बूझ कर धीरे धीरे देशी रियास्तों में फैलाने से ही देशी रजवाड़े अपने प्रबन्ध की स्वतंत्रता को सब से अधिक दृढ़ समझ सकते हैं और साम्राज्य की ओर से किसी प्रकार के हस्तक्षेप को सब से अच्छी तरह बचा सकते हैं।"

राजनीति और शासन के सिद्धान्त—अङ्गरेज़ी सरकार की बड़ी अभिलाषा रहती है कि देशी रजवाड़े इस उत्तमता के

साथ अपने राज्यों का प्रबन्ध करें कि वे आदर्श हों और देशी लोगों को उनका अभिमान हो। यही अभिलाषा राजा महा-राजों को भी रहती है। पर कोरी अभिलाषा से तो कुछ होता नहीं। उस अभिलाषा को पूरा करने के लिए काम करना चाहिए, जो बुद्धिमान् और उत्साहियों के लिए कुछ कठिन नहीं है।

मैं यहां कुछ सिद्धान्त बतलाता हूं जिन पर चलने से राजा महाराजा अपने को आदर्श बना सकते हैं। इन सिद्धांतों को संसार के सब सभ्य राज्य मानते हैं। इन सिद्धांतों को जान लेना ही बस नहीं है। इनको समझे और मन में समावे। इनको सदा ध्यान में रक्खे और राज्य का हर एक काम इन्हीं के अनुसार करे। इन सिद्धांतों को केवल जान लेना और नित्य के व्यवहार में उन को काम में न लाना वैसाही अपराध है जैसे अच्छा कंपास रख कर भी उसकी ओर जहाज़ चलाते समय न देखना।

पुराने ढर्रे के कुछ लोग कहेंगे कि वर्तमान महाराज इन सिद्धांतों को क्यों जाने और उन पर क्यों चले? पुराने महाराज लोग तो ऐसा नहीं करते थे और वे अपने राज्य का प्रबन्ध करते ही थे। आज कल के महाराज भी वही करें।

यहां यह स्पष्ट कहना पड़ता है कि पुराने महाराज लोग बहुत अच्छे शासकों में से न थे। वे पुराने पूर्वीय मन-माने ढंग पर राज्य करते थे। वे प्रजा के सुख का इतना ध्यान

नहीं रखते थे और यदि थोड़ा बहुत रखते भी थे तो उस सुख को बढ़ाने के सब से अच्छे उपायों को नहीं जानते थे। कभी कभी वे बड़ी भारी भूलें करते थे; बड़ी बड़ी अड़चनों में फंस जाते थे। यदि वे इन ठीक सिद्धांतों को जानते होते तो ऐसा न होता। पुराने राजा महाराजों को इन सिद्धांतों को जानने के उतने साधन भी नहीं थे जितने आजकल के महाराजों के लिए हैं। एक बात और भी है। तब की और अब की दशा में बहुत कुछ अन्तर है। तब यदि कहीं किसी राज्य का प्रबन्ध बुरा होता था तो उस पर बहुत लोगों का ध्यान नहीं जाता था। अब चारों तरफ़ रेल दौड़ती है, डाक और तार का प्रबन्ध है। एक राज्य में जो बुराई होगी उसकी ख़बर चट दूर दूर तक फैल जायगी।

रेल हो जाने के कारण बाहर के लोग भी देशी राज्यों में बहुत आया जाया करते हैं। इससे देशी राज्यों का कुप्रबन्ध ऐसे लोगों को पहले के लोगों से अधिक खलेगा और उस पर बड़ा हल्ला मचेगा।

देशी राज्यों के लोगों का भी कलकत्ता बम्बई तथा अङ्गरेज़ी राज्य के और बड़े बड़े नगरों में आना जाना रहता है। उनको अब अपने यहां की राज्यप्रणाली को और जगहों की राज्यप्रणाली से मिलान करने का अधिक अवसर मिलता है।

ज्ञान और शिक्षा की वृद्धि के कारण अब लोगों के चित्त में 'उत्तम राज्य' का आदर्श बहुत ऊंचा हो गया है। जो

बुरा राज्य वे पहले सहन कर सकते थे अब नहीं करेंगे। जिस प्रकार के उत्तम राज्य से उन्हें पहले सन्तोष हो जाता था उस प्रकार के राज्य से अब नहीं होगा।

एक बात और है। पहले सब देशी रियासतों में थोड़ा बहुत बुरा राज्य था। यहां तक कि अङ्गरेज़ी राज्य में भी व्यवस्था ठीक नहीं थी। पर अब चारों ओर उन्नति है, कहीं कम कहीं ज्यादा। अतः यदि कोई देशी रियासत आगे नह बढ़ेगी तो लोगों को यह बात खटक जायगी और असन्तोष फैलेगा।

सब से बढ़ कर बात तो यह है कि अङ्गरेज़ी सरकार को जिस का भारतवर्ष में साम्राज्य है पहले की अपेक्षा अब बुरा शासन अधिक खटकता है। अङ्गरेज़ी सरकार अपने ऊपर इस बात का ज़िम्मा समझती है कि देशी रियासतों में बुरा राज्य न रहने पावे। अङ्गरेज़ सरकार मानो प्रत्येक देशी रजवाड़े से कहती है- " पहिले यदि तुम बुरा राज्य करते थे तो घर ही में दवा हो जाती थी अर्थात् तुम्हारी प्रजा बिगड़ जाती थी और अत्याचार की समाप्ति कर देती थी। इस बात का डर ऐसा था जिससे कुराज्य के लिए कुछ रोक रहती थी। पर अब हम तुम्हारी प्रजा को इस विद्रोह रूपी उपाय का अवलम्बन नहीं करने देंगे। जहां कहीं इस तरह का विद्रोह होगा उसे अपनी सेना द्वारा दबाने का भार हमने अपने ऊपर लिया है। इस प्रकार अत्याचार को दूर करने का जो उपाय

प्रजा के हाथ में था उसे हमने ले लिया। पर अत्याचार अवश्य दूर होना चाहिए। उसे दूर कौन करेगा? हमारा साम्राज्य भारत में है अतः हमने प्रजा की ओर से इस कर्त्तव्य को अपने ऊपर लिया है। जब किसी देशी रियासत की प्रजा बदअमली की शिकायत करेगी तब हम पूरी जांच करेंगे और उसे ठीक करेंगे। यदि आवश्यक समझेंगे तो बुरा शासन करनेवाले राजा को गद्दी से उतार तक देंगे और उसके स्थान पर दूसरे को बैठावेंगे।"

अङ्गरेज़ी सरकार ही देशी रियासतों के कुप्रबन्ध और सुप्रबन्ध का निर्णय करने वाली है। इस बड़ी बात को देशी रजवाड़ों को कभी न भूलना चाहिए। उन्हें सदा ध्यान रखना चाहिए कि अङ्गरेज़ी सरकार को इस बात का पूरा इतमीनान रहे कि वे अच्छी तरह राज्य कर रहे हैं, कमसे कम उनका शासन बुरा नहीं है।

इससे यह जान लेना ज़रूरी है कि किसको अङ्गरेज़ी सरकार अच्छा शासन समझती है, किस को बुरा। देशी राजा महाराजों को शासन के उन सिद्धांतों को समझ लेना चाहिए जिन्हे अङ्गरेज़ी सरकार मानती है।

मैं उन बड़े सिद्धांतों को आगे लिखता हूं जो अच्छे शासन के लिए आवश्यक हैं। राजा महाराजों को उन पर पूरा ध्यान देना चाहिए क्यों कि उन्हीं पर चलने से उन्हें यश और सुख मिलेगा।

सब से मुख्य सिद्धान्त यह है। राजाओं का पहला धर्म प्रजा के सुख की वृद्धि करना है।

प्रजा का सुख किस में है और वह सुख किस प्रकार बढ़ सकता है हम आगे चल कर कहेंगे। यह बात बहुत ब्योरे की है जिस में थोड़ा बहुत मतभेद भी है। पर इस सिद्धान्त को सब मानते हैं कि राजा का धर्म्म प्रजा के सुख की वृद्धि करना है।

इस सिद्धान्त का बार बार मनन करना चाहिए। इसे राज काज में काम में लाना चाहिए। दीवान से लेकर जितने कर्मचारी हों सब पर इस बात का ज़ोर देना चाहिए कि वे सदा सब कहीं इस सिद्धान्त का पालन करें।

बहुत से राजा महाराजा इस सिद्धान्त को मानते हुए भी राजकाज के व्यवहार में उसके अनुसार नहीं चलते। ऐसा नहीं चाहिए।

मैं दो एक ऐसे कार्य्यों का दृष्टान्त देता हूं जो इस महत् सिद्धान्त के विरुद्ध हैं।

मान लीजिए कि किसी राजा साहब को जवाहरात ख़रीदने के लिए बहुत सा रुपया चाहिए। इसके लिए वे राज्य के ख़ज़ाने में से बहुत सा रुपया लेते हैं अर्थात् जितना माल-गुज़ारी में से अपने ख़ानगी ख़र्चे के लिए उन्हें लेना चाहिए उस से कहीं अधिक लेते हैं। यहां वे उस सिद्धान्त के विरुद्ध आचरण करते हैं जिसे मैंने बतलाया है क्योंकि वे सर्वसाधारण

के उस रूपये को स्वार्थ में लगाते हैं जो किसी न किसी तरह प्रजा के सुख की वृद्धि में लगता।

मेरा अभिप्राय यह नहीं है कि राजा महाराजा जवाहरात न ख़रीदें। जब उचित और आवश्यक हो तब जवाहरात भी ख़रीदे जांय पर एक हिसाब से।

दूसरा दृष्टान्त लीजिए। कोई राजा हैं जो बिना किसी आवश्यकता के एक महल के बाद दूसरा महल बनवाते चले चले जा रहे हैं और इसके लिए वे राज्य के ख़ज़ाने से बहुत सा रूपया लेते हैं अर्थात् मालगुज़ारी में से जितना अपने खानगी ख़र्च के लिए उन्हें लेना चाहिए उससे कहीं अधिक लेते हैं। वे उक्त सिद्धान्त के विरुद्ध कार्य्य करते हैं। उनके पास काफ़ी महल होने चाहिएं। पर उनकी भी हद है। रूम के सुलतान और मिस्र के खदीव ने महल बनवाते बनवाते राज्य का ख़ज़ाना खाली कर दिया। यह भी मूर्खता ही है कि आज एक नया महल बनवाना और कल उसे छोड़ना।

इसी प्रकार कोई राजा अपने सम्बन्धियों और कृपापात्रों का ख़ूब घर भरना चाहते हैं और इसके लिए राज्य के ख़ज़ाने से बहुत सा रुपया लेते हैं जो प्रजा के सुख की वृद्धि में लगता। यह भी इस सिद्धान्त का उल्लङ्घन है। सम्बन्धियों और कृपापात्रों की ख़ातिर मुनासिब है पर एक ठिकाने से।

जिस सिद्धान्त का मैं समर्थन कर रहा हूं उसके अनुसार धर्म्मार्थ और परोपकार में जो दान दिए जांय उनकी भी

उचित सीमा होनी चाहिए। ऐसे दान भी एक हिसाब से दिए जायँ जिसमें प्रजा की सुख-वृद्धि के साधन खण्डित न हों।

सारांश यह कि जब कभी राजा महाराजा कोई भारी ख़र्च करने को हों तब वे इस सिद्धान्त को स्मरण कर लें और मन में सोचें "क्या इस ख़र्च से प्रजा के सुख की कुछ वृद्धि होगी?" यदि उनके मन में आवे कि "नहीं" तो उन्हें इस ख़र्च को उक्त सिद्धान्त के विरुद्ध समझ कर रोक देना चाहिए।

बहुत से ख़र्च ऐसे होते हैं जिनमे प्रजा को कोई सुख नहीं होता पर राजा लोग अपने सुख के लिए उसे उठाना चाहते हैं। वे लोग इस प्रकार का ख़र्च करें; पर मालगुज़ारी के उस अंश में से जो उनके निज के ख़र्च के लिए मुक़र्रर है, अर्थात् ख़ानगी मद से।

कोई राजा जो उक्त सिद्धान्त का पालन करता है ऐसा कभी नहीं समझता कि "हमें अधिकार है कि हम राज्य की मालगुज़ारी को जिस तरह चाहें उस तरह ख़र्च करें"। राज्य राजा की निज की सम्पत्ति नहीं है बल्कि प्रजा की धरोहर है। प्रजा की मालगुज़ारी उसके हाथ में इस लिए दी गई है जिसमें वह उसे प्रजा के हित में लगावे। इस कर्तव्य का उसे ध्यान रखना चाहिए।

इस कर्तव्य का यह मतलब नहीं कि राजा महाराजों को ठीक ठिकाने से जैसा जी चाहे वैसा ख़र्च करने की स्वतंत्रता

न रहे। जैसा मैंने ऊपर कहा है राजा महाराजा अपने मालगुज़ारी के अंश में से अर्थात् ख़ानगी मद से बेधड़क ख़र्च करें।

अत: यदि देखा जाय तो राजाओं के निज के सुख से और उक्त सिद्धान्त से कोई विरोध नहीं पड़ता है। राजा लोग अपनी प्रजा को भी सुखी कर सकते हैं और साथ ही अपने को भी सुखी कर सकते हैं। बचाने की बात यह है कि राजा लोग अपने सुख के लिए प्रजा के सुख की हानि न करें।

प्रजा से मेरा अभिप्राय सब जातियों और सब सम्प्रदायों के लोगों से है। जहाँ तक हो सके राजा महाराजों को सब जातियों और सम्प्रदायों का बराबर मान रखना चाहिए। ऐसा न हो कि कुछ जातियों और सम्प्रदायों का जी दुखा कर कुछ जातियों और सम्प्रदायों पर विशेष कृपा दिखाई जाय। राजाओं को चाहिए कि अपने राज्य के सब मनुष्यों के सुख की वृद्धि करें चाहे वे हिन्दू हों वा मुसलमान, धनी हों वा ग़रीब, सरदार हों वा काश्तकार। सारांश यह है कि राजाओं को अपनी सारी प्रजा का पिता वा पालनकर्ता होना चाहिए न कि किसी विशेष जाति का।

यह केवल उचित और न्यायसंगत ही नहीं है बल्कि बड़ी पक्की नीति की बात है। जो राजा अपनी सारी प्रजा पर समान अनुग्रह रखते हैं उन्हें सारी प्रजा का बल रहता है। पर जो राजा अपनी प्रजा के किसी विशेष वर्ग ही पर अनुग्रह

रखते हैं उनका बल दूसरे वर्गों के विरोध के कारण घट जाता है। राजकाज में यह बात बहुत ध्यान रखने की है।

जो कुछ मैंने अभी कहा है उसके अनुसार एक बात तो यह होनी चाहिए कि रियासत की नौकरियों के लिए जन-संख्या के हिसाब से सब जातियों और सम्प्रदायों में से आवश्यक योग्यता रखनेवाले मनुष्य लिए जायँ। यह भूल होगी कि केवल दक्षिणी, या केवल गुजराती, या केवल मुसलमान, या केवल पारसी ही रक्खे जाँय। इन सब जातियों के लोग हिसाब से रक्खे जायँ।

दूसरी बात यह होनी चाहिए कि प्रजा के किसी एक वर्ग पर दूसरे की अपेक्षा अधिक कर न लगाया जाय।

तीसरी बात यह होनी चाहिए कि सब लोगों के साथ समान न्याय किया जाय चाहे वे किसी धर्म वा सम्प्रदाय के हों। मान लीजिए कि एक ब्राह्मण और मुसलमान के बीच कोई मुक़दमा है। उसमें किसी हिन्दू राजा का ब्राह्मण का पक्षपात करना वा किसी मुसलमान शासक का मुसलमान का पक्षपात करना भारी भूल है। इसी प्रकार मित्रों, कृपापात्रों, सम्बन्धियों आदि का पक्षपात भी नहीं होना चाहिए। अच्छे राज्य का एक बड़ा लक्षण यह है कि वहाँ सबके साथ समान न्याय होता है।

देशी रियासतों में बहुत से सरदार यह कहनेवाले मिलते हैं कि "राज्य तो महाराज के और हमारे वास्ते है ही; मंत्रियों का यह काम है कि जहाँ तक मालगुज़ारी वसूल करते

बने करें जिससे महाराज और हम लोग खूब सुख करें"। ऐसे लोग प्रजा के सुख दुख को कोई चीज़ नहीं समझते। कहने की आवश्यकता नहीं कि उनका यह सिद्धान्त बिलकुल पोच है। राजा महाराजों को ऐसे लोगों की बातों पर कुछ भी ध्यान न देना चाहिए। कुछ दिनों में शिक्षा बढ़ने पर ऐसे विचार के लोग न रह जायँगे।

सरदार लोग प्रजा के एक अंग क्या प्रधान अंग हैं और अवश्य मान और रक्षा के अधिकारी हैं। पर यह नहीं हो सकता कि थोड़े से सरदारों के सुख के लिए बड़ी भारी प्रजा के सुख की हानि की जाय।

इतिहास अनुभव का बड़ा भारी भांडार है। इतिहास के अनुभव से यह देखा जाता है कि जिन राज्यों ने प्रजा के सुख का ध्यान रक्खा है वे सब से अधिक काल तक रहे हैं और जिन्होंने प्रजा के सुख का ध्यान नहीं रक्खा है वे जल्दी मिट गए हैं।

इस समय हम लोगों की आँख के सामने एक अच्छा नमूना मौजूद है। अंगरेज़ी सरकार की ओर देखिए। यद्यपि भारत में उसका राज्य विदेशी है पर अब से पहले जितने राज्य यहां हुए हैं उन सब से कहीं बढ़कर शक्तिमान् और कहीं अधिक दृढ़ है। क्यों? इसलिए कि उसका पहला सिद्धांत अपनी सारी प्रजा के सुख की वृद्धि करना है। संभव है कि यहां वहां अंगरेज़ी सरकार से कोई भूल भी बन पड़ी हो और उसकी आलोचना भी हुई हो। पर सब बातों को देखते यही

भाव उठता है कि भारत के अंगरेज़ी राज्य से बढ़ कर वा उसके समान दूसरा उत्तम राज्य नहीं मिल सकता। इसी भाव पर अंगरेज़ी राज्य की दृढ़ता स्थिर है। जब तक यह भाव बना है तब तक अंगरेज़ी राज्य भी बना है और लोग चाहते हैं कि यह बना रहे, और यह भाव बराबर बना रहेगा क्योंकि अंगरेज़ी राज्य की व्यवस्था इस प्रकार की है कि उसमें उक्त सिद्धान्त का कभी परित्याग न होगा। जहां तक होगा जातीय हित और जातीय कर्तव्य के बढ़ते हुए विचार से तथा सर्वसाधारण का मन रखने और हौसला पूरा करने की नीयत से अंगरेज़ी सरकार उक्त सिद्धान्त को दिन दिन और अधिक काम में लाती जायगी।

अब यदि एक विदेशी सरकार को उक्त सिद्धान्त से इतनी शक्ति और दृढ़ता प्राप्त हुई है तो देशी राजा महाराजों को भी चाहिए कि अपने यहां इस सिद्धान्त का पूरा आदर करें। इसके अनुसार उन्हें अपने राज्यों में जान और माल की हिफ़ाज़त के लिए पुलिस का अच्छा प्रबंध करना चाहिए। मामलों को तै करने और अपराधियों को दंड देने के लिए न्यायालय स्थापित करने चाहिए। व्यर्थ प्रजा को पीड़ित करने वाले करों को उठा देना चाहिए।

प्रजा का सुख—प्रजा का सुख दो प्रकार का है। एक तो वह जो हर एक आदमी अपने परिश्रम से अपने लिए प्राप्त कर सकता है और दूसरा वह जिसे वह अपने परिश्रम

से नहीं प्राप्त करसकता बल्कि जो राज्य की ओर से उसे पहुंचाया जाता है।

अब मैं इन दोनों प्रकार के सुखों के थोड़े से दृष्टान्त देता हूं।

नीचे उस प्रकार के सुख के दृष्टान्त दिए जाते हैं जो हर एक आदमी अपने परिश्रम से प्राप्त कर सकता है—जैसे वह सुख,

जो पूरा भोजन वस्त्र आदि मिलने से होता है।

जो अच्छा घर मिलने से होता है।

जो बरतन, असबाब, गाड़ी घोड़े आदि से होता है।

जो स्वास्थ्य का ध्यान रखने से होता है।

जो सदाचार से होता है।

जो धर्म पर चलने से होता है।

इसी तरह और भी समझिए। सच तो यह है कि मनुष्य का बहुत सा सुख तो उसी के हाथ है, अर्थात् उसी की मिहनत, किफ़ायत, बुद्धि और दूरदर्शिता आदि पर निर्भर है।

नीचे उस प्रकार के सुख केदृष्टान्त दिए जाते हैं जो प्रत्येक मनुष्य अपने परिश्रम से नहीं प्राप्त कर सकता बल्कि जो सारे समुदाय की प्रतिनिधि सरकार की ओर से पहुंचाया जाता है, जैसे वह सुख—

जो इस निश्चय से होता है कि हमें कोई लूटेगा नहीं, हमारा माल न कोई ज़बरदस्ती छीनेगा, न धोखा देकर उड़ावेगा।

जो इस निश्चय से होता है कि हम मारे या घायल नहीं किए जाँयगे, हमारा अंगभंग नहीं होगा।

जो इस निश्चय से होता है कि औरों से हम से जो झगड़ा होगा उसकी पूरी जाँच होगी और उसका ठीक निर्णय किया जायगा।

जो इस निश्चय से होता है कि हम अपने लाभ के लिए परिश्रम करने में स्वतंत्र हैं, कोई उस में विघ्न बाधा न डालेगा।

जो यह देख कर होता है कि बनिज व्यापार तथा आने जाने के लिए देश में अच्छी अच्छी सड़कें आदि हैं।

जो यह देख कर होता है कि शहरों, क़सबों और गावों में स्वास्थ्य-रक्षा का अच्छा प्रबन्ध है जिससे रोग व्याधि का भर सक बचाव होता है।

जो यह देख कर होता है कि रोग व्याधि की शान्ति के अच्छे उपाय पहुंच के भीतर हैं।

जो यह देख कर होता है कि लड़कों को पढ़ाने के लिए स्कूल पाठशालाएँ हैं। इसी प्रकार और भी समझिए।

इस प्रकार लोगों के सुख के दो विभाग हुए। पहला वह सुख जो हर एक आदमी अपने लिए प्राप्त कर सकता है और दूसरा वह जिसे हर एक आदमी स्वयं नहीं प्राप्त कर सकता. बल्कि जो राज्य की ओर से पहुंचाया जाता है।

इस विभाग को ध्यान में रख कर मुझे यही कहना है कि पहले प्रकार का सुख तो प्रजा ही के ऊपर छोड़ देना

चाहिए अर्थात् राज्य को उसके विषय में कोई तरद्दुद न करनी चाहिए, पर दूसरे प्रकार के सुख की व्यवस्था कर्तव्य समझ कर राज्य ही को करनी चाहिए।

यह बात अच्छी तरह समझ रखना चाहिए कि इस कर्तव्य के पालन से प्रजा को केवल दूसरे प्रकार का ही सुख न होगा बल्कि पहले प्रकार का सुख भी होगा। यदि राज्य इस कर्तव्य का पालन न करेगा तो अपने परिश्रम से सुख प्राप्त करना भी प्रजा की शक्ति के बाहर होगा। सारांश यह कि यदि राज्य इस कर्तव्य का पालन न करेगा तो प्रजा को किसी प्रकार का सुख न होगा। अतः सब देशी रजवाड़ों को अपना यह मुख्य धर्म समझना चाहिए कि अपने सुख के लिए प्रजा जो नहीं कर सकती उसे वे करें।

राजाओं का कर्त्तव्य—यदि अदालत किसी राजकर्मचारी या ख़ास नौकर का हाज़िर होना आवश्यक समझे तो राजा महाराजों को अदालत की पूरी सहायता करनी चाहिए। अदालत में जिन जिन बातों की आवश्यकता हो उन्हें पूरा कराना चाहिए। ऐसे कर्मचारी और नौकर बराबर यह समझें कि हम अदालत की पहुंच के बाहर नहीं है, हमें अदालत के सामने अवसर पड़ने पर जाना पड़ेगा, और हमें दूसरों के स्वत्व का वैसा ही ध्यान रखना पड़ेगा जैसा और प्रजा को। वे यह समझे रहें कि अदालत की ओर से उनके साथ कोई रिआयत नहीं की जायगी। ऐसे लोग प्रायः बड़े चालाक होते

हैं। वे राजाओं का मिज़ाज परखते रहते हैं और उसी के अनुसार चलते हैं।

राजा महाराजों को चाहिए कि वे स्वयं न्याय की मान-मर्य्यादा रक्खें। जैसे, वे अपने नौकर चाकरों को भी स्वयं न मारें पीटें और न किसी तरह की चोट पहुंचावें। वे स्वयं किसी के क़ैद करने, माल असबाब ज़ब्त करने की आज्ञा न दें। राजा महाराजों को चाहिए कि जितने जुर्म के मामले वा दीवानी के झगड़े हों उन्हें अदालतों को सुपुर्द करें, वे जैसा उचित समझेंगी करेंगी। राजा महाराजों को जिसका जितना देना हो बराबर दे देना चाहिए। जिसके साथ जो व्यवहार हो उसको उन्हें उसी तरह पूरा करना चाहिए जिस तरह और आदमी करते हैं। जिसका जो कुछ चाहता हो जहाँ तक हो सके साफ़ कर देना चाहिए। ऐसा न हो कि उसे उससे हाथ धोना पड़े वा उसके लिए अदालत में जाना पड़े। यदि राजा महाराजा ऐसा करेंगे तो बैर विरोध से बचे रहेंगे, सर्वप्रिय रहेंगे और साथ ही अदालतों की मान मर्य्यादा भी दृढ़ करेंगे।

बड़ी भारी बात यह है कि राजा महाराजों को यह ध्यान रखना चाहिए कि उनका कर्तव्य बहुत ऊँचा और राज काज की सब बातों की देखभाल रखना है। छोटे छोटे कामों में स्वयं हाथ डालना उनका काम नहीं है। राजा महाराजों को अपने राज-कर्तव्य के पालन की अभिलाषा होनी चाहिए

अमले और कारकुन लोगों के छोटे छोटे काम करने की नहीं जो राजा अपना राज-कर्तव्य नहीं जानते हैं अथवा राज-कर्तव्य के पालन करने में असमर्थ हैं वे ही अपने राज-कर्तव्य को छोड़ कर ऐसे छोटे छोटे कामों को करने जाते हैं जिन्हें अमले और कारकुन उनसे कहीं अच्छी तरह और सोच समझ कर कर सकते हैं।

मनुष्यों पर शासन करनेवाले राजा की योग्यता इसमें नहीं है कि वह सब काम आप करे। इस बात का हौसला करना एक छोटी बात है। यह आशा करना भी व्यर्थ ही है कि लोग समझेंगे कि महाराज सब काम कर सकते हैं। राजा राज्य का शरीर नहीं है आत्मा है। उसके प्रभाव से और उस के आदेश पर हाथों को काम करना चाहिए और पैरों को चलना चाहिए। उसे सोचना भर चाहिए कि क्या क्या करना होगा, पर उसके करने के लिए औरों को नियुक्त करना चाहिए। उसकी योग्यता तो युक्तियों वा उपायों को सोचने में और साधकों (करनेवालों) को चुनने में है। उसे न तो उनके (साधकों) काम के किनारे जाना चाहिए और न उनको अपने काम में हाथ डालने देना चाहिए। राजा को काम करने वालों के विश्वास पर भी बहुत अधिक न रहना चाहिए। उसे समय समय पर उनके कामों को देखते रहना चाहिए। उसमें उनकी भूल चूक पकड़ने की योग्यता होनी चाहिए। अच्छा राज्य वही करता है जो लोगों की योग्यता और प्रवृत्ति को पहचानता है और उन्हें उन कार्य्यों पर नियुक्त करता है जो उनकी योग्यता

के अनुकूल हैं। राज्य के अधिपति की योग्यता राज्य के काम करनेवालों का शासन करने में है। जो आधिपत्य रखता है उसे काम करनेवालों को जाँचना, रोकना, और ठीक करना चाहिए; उसे उन्हें उत्साहित करना, बढ़ाना, बदलना और हटाना चाहिए; उसे सदा उन पर दृष्टि रखनी चाहिए और उनको अपने हाथ में रखना चाहिए। पर राज्य के प्रत्येक विभाग के छोटे छोटे ब्योरों में हाथ डालने से ओछापन और अविश्वास प्रकट होता है और मन में छोटी छोटी बातों की चिन्ता बनी रहती है जिससे राजाओं के ध्यान देने योग्य बड़ी बड़ी युक्तियों को सोचने विचारने की छुट्टी ही नहीं मिलती। बड़ी बड़ी युक्तियों को सोचने के लिए तो पूरी शान्ति और स्वतंत्रता चाहिए। काम काज के पेचीले ब्योरों की हैरानी न हो, छोटी छोटी बातों की ओर ध्यान न बँटा हो। जो चित्त छोटे छोटे ब्योरों में फँसता है वह उस मद्य के समान है जिस में न तो कोई स्वाद है और न शक्ति। वह राजा जो अपने नौकरों का काम करने में लगता है सदा सामने आई हुई बातों का ध्यान रखता है भविष्य की ओर दृष्टि नहीं फैलाता। वह दिन के दिन जो काम आया उसी में फँसा रहता है। उसका उद्देश्य उसी तक रहता है, इससे उस काम को बड़ी प्रधानता प्राप्त हो जाती है। पर उस काम को यदि और कामों के साथ मिलान किया जाय तो उसकी वह प्रधानता न रह जाय। जो चित्त एक बार एक ही बात को ग्रहण करेगा वह संकुचित हो ही जायगा।

बिना कई बातों को विचारे, उन्हें एक दूसरे के साथ मिलाए और इस क्रम से मन में बैठाए कि उनकी एक दूसरे से प्रधानता प्रकट हो किसी एक बात के विषय में ठीक ठीक निर्णय करना असम्भव है। वह जो राजकाज में इस नियम का पालन नहीं करता उस गवैये के समान है जो अलग अलग कई सुर निकाल कर रह जाता है और उनको मिला कर कोई राग नहीं उत्पन्न करता जो कानों को भी अच्छा लगे और जी को भी लुभावे। अथवा यों कहिए कि वह उस कारीगर के समान है जो बिना अपनी इमारत का हिसाब किताब समझे और नक्काशी आदि का क्रम मन में बैठाए रंग बिरंग के कटे हुए पत्थरों और खंभों का ढेर लगाता चला जाता है। ऐसा कारीगर कोठरी बनाते समय यह ध्यान नहीं रक्खेगा कि इसमें सीढ़ी भी लगानी होगी, भवन उठाते समय यह ध्यान न रक्खेगा कि बीच में आंगन छोड़ना होगा और इधर उधर फाटक रखने होंगे। उसका बनाया हुआ काम ऐसे जुदे जुदे खंडों का ऊटपटांग ढेर होगा जिनका एक दूसरे से कुछ मेल नहीं और जो मिल कर कोई पूरा रूप नहीं खड़ा करते। ऐसे काम से उसे यश मिलना तो दूर रहा सब दिन के लिये कलंक मिलेगा। ऐसे काम से समझा जायगा कि उसकी सूझ इतनी दूर तक की न थी कि वह अपने सोचे हुए ढांचे के सब पुरज़ों को एक साथ मन में बैठाकर रखता अर्थात् उसकी ग्रहण-शक्ति संकुचित थी और उसका गुण दूसरे का आश्रित था। क्योंकि वह जो एक एक अंग को ही एक साथ देख सकता है केवल दूसरों के सोचे हुए ढांचे पर काम करने के योग्य होता है। यह निश्चय

रखना चाहिए कि राज्य चलाने में भी संगीत के समान मेल मिलाने और गृह निर्म्माण के समान हिसाब किताब बैठाने की ज़रूरत होती है। जो गाने में किसी एक साज को लेकर बैठता है वह साधारण गवैया ही समझा जाता है पर जो सारे साजबाज का मिलान देखता है वही गाने का आचार्य्य वा उस्ताद माना जाता है। इसी प्रकार वह जो खंभा गढ़ता है वा दीवार जोड़ता है केवल संगतराश वा थवई है पर जो सारी इमारत का ढांचा मनमें सोचता है और उसके एक एक अंग को मन में बैठाता है वही शिल्पी है। अस्तु, जो राजा बहुत फँसे रहते हैं और सब से अधिक ब्योरे निपटाते हैं वे यथार्थ में राज्य नहीं करते हैं बल्कि मज़दूरों वा नौकरों का काम करते हैं। राज्य को चलाने वाली आत्मा तो वह है जो कुछ न कर के भी सब कुछ कराती है, जो सोचती और युक्ति भिड़ाती है, जो आगा पीछा देखती है, जो हिसाब किताब (इस का कि कहां कौन वस्तु कितनी कितनी चाहिए) बैठाती है, जो सब वस्तुओं को क्रम से लगाती है और न जानें कब कैसा पड़े इसके लिए प्रबन्ध रखती है।

नियम और व्यवस्था—अंगरेजी राज्य में वा और कहीं जो अच्छे नियम हों उन्हें राज्य में प्रचलित कर लेना चाहिए। केवल स्वतंत्रता वा नवीनता दिखाने के लिए भेद रखना ठीक नहीं। लोगों के इस कहने की कुछ परवा न करनी चाहिए कि महाराज तो बात बात में नकल कर रहे हैं। यदि नियम अच्छा हो और प्रजा की रहन सहन के अनुकूल हो तो उसकी नकल करने में कोई बुराई नहीं है। एक देश दूसरे देश की

अच्छी बातों को ग्रहण कर सकना है। सभ्य से सभ्य जातियां जिन्हें अपने गौरव और स्वतंत्रता का बहुत अभिमान होता है इस मार्ग का अनुसरण करती हैं। यदि वे ऐसा न करें तो एक देश का सञ्चित ज्ञान और अनुभव दूसरे देश के किसी काम ही का न ठहरे।

अपढ़, मूर्ख और स्वार्थी लोग बराबर राजा महाराजों से कोई न कोई कार्रवाई नियम वा कानून के विरुद्ध कराने वा औरों से करवाने की प्रार्थना किया करते हैं। वे यहां तक कहते हैं "क्या महाराज जो चाहें सो नहीं कर सकते? क्या महाराज को भी कोई रोकने वाला है? यदि राज्य में महाराज की कुछ चलती नहीं है तो महाराज किस बात के हैं?" इस प्रकार की बातें बराबर किसी न किसी रूप में राजा महाराजों से कही जाती हैं। उनको चाहिए कि ऐसी ऐसी बातें सुन कर ज़रा भी ताव में न आवें बल्कि हंसते हुए यह उत्तर दें"

"शिक्षा और विचार से यह विश्वास मेरे मन में अच्छी तरह बैठ गया है कि वही राजा' सचमुच बड़ा है जो उन नियमों का आदर करता है जो प्रजा के हित के लिए बनाए गए हैं। मैं इसी विश्वास के अनुसार कार्य्य करूंगा।" इसी रीति पर चलने से राजा महाराजा बड़े और प्रजा पालक कहे जा सकते हैं तथा देश के इतिहास में कुछ नाम छोड़ सकते हैं।

राज-कर्त्तव्य—जो बड़े बड़े सिद्धान्त मैंने बतलाए हैं वे मेरे मन में अच्छी तरह बैठें हुए हैं। मुझे भिन्न भिन्न रियासतों

मैं दीवानी करते करते बीस वर्ष से ऊपर हुए। इस बीच में राज्य प्रबन्ध करने में ये ही सिद्धान्त मेरे आधार रहे हैं। इन सिद्धान्तों के अनुसार प्रजा का हित करने में मेरी आत्मा को जो सन्तोष प्राप्त हुआ है वह वर्णन नहीं किया जा सकता। राजा महाराजों को इन सिद्धान्तों के अनुसरण से और भी अधिक संतोष प्राप्त होगा। मनुष्य के लिए इससे बढ़ कर शुद्ध और श्रेष्ठ और कोई आनन्द ही नहीं है। यह आनन्द ऐसा है जो जीवन भर रहता है। वेदों का यह उज्वल सिद्धान्त है कि वही मनुष्य जीता है जो दूसरों की भलाई के लिए जीता है। देश में राजा से बढ़ कर जिस के हाथ में सब से अधिक धन और सब से अधिक शक्ति रहती है, दूसरों की भलाई और कौन कर सकता है? यदि मेरे ऐसे साधारण मनुष्य को प्रजा की सुख-वृद्धि के लिए सच्चा प्रयत्न करने के कारण इतना मान और यश प्राप्त हुआ है तो राजा महाराजों को प्रजा का हित करने के कारण कितनी उज्वल और अचल कीर्ति प्राप्त हो सकती है समझने की बात है। पर सांसारिक यश और कीर्ति से कहीं बढ़ कर फल उनके लिए रक्खा है। मैं वहां की बात कहता हूं जहां की प्रेरणा से राजा महाराजा इतने ऊंचे पद पर प्रतिष्ठित होते हैं और उन्हें उपकार करने का इतना अवसर मिलता है।

सुन्दर शासन के सम्बन्ध में परामर्श देते हुए मैं वेथल नामक एक यूरोपियन ग्रंथकार की बातों की ओर ध्यान दिलाता हूं जो १८ वीं शताब्दी में हुआ है और जिसके उपदेश मनुष्य

माघ के विशेष कर राजाओं के बहुत काम के हैं। नीचे उसके कुछ विचार उद्धृत किए जाते हैं—

" समाज को चलाने वाले बुद्धिमान् राजा को यह अच्छी तरह समझ रखना चाहिए कि उसके हाथ में राज-शक्ति केवल राज्य की रक्षा और सारी प्रजा की भलाई के लिए दी गई है। राजकाज चलाने में उसे यह न समझना चाहिए कि जो कुछ है सो हमारे ही लिए तो है। उसे अपना ही संतोष वा अपना ही लाभ न देखना चाहिए वल्कि अपनी सारी विद्या बुद्धि राज्य वा प्रजा के हित में लगानी चाहिए जो उसके अधीन है।

" पर बहुतेरे राज्यों में चापलूसी का पाप बहुत दिनों से घुसा है जिसके कारण यह मूल मंत्र ध्यान में नहीं रहने पाता। बहुत से जूती चाटने वाले दरबारी अहंकारी राजाओं के मन में यह जमा देते हैं कि जन-समूह उनके लिए बना है, वे जन-समूह के लिए नहीं बनाए गए हैं। ऐसे राजा राज्य को अपनी बपौती वा निज की सम्पत्ति समझने लगते हैं। वे प्रजा वा जन समूह को समझते हैं कि भेड़ बकरी के झुंड हैं इन से जिस प्रकार हो रुपया निकालो और मनमानी मौज उड़ावो। इसी कारण अहंकार, असंतोष, और विरोध से भरे हुए सत्यानाशी युद्ध होते हैं। इसी कारण वे खलनेवाले टैक्स वा कर लगाए जाते हैं जिनकी आमदनी सत्यानाशी ठाट बाट वा भोग विलास में खपती है अथवा कृपापात्रों वा रखेली स्त्रियों पर फूंकी जाती है। इसी कारण अच्छी अच्छी जगहें अयोग्य कृपापात्रों को मिलती हैं, योग्यता और गुण का

कुछ भी विचार नहीं किया जाता, तथा जिन बातों में राजाओं को रुचि नहीं होती वे दीवान मुसद्दियों पर छोड़ दी जाती हैं। ऐसे अभागे राज्य में कौन कह सकता है कि राजशक्ति सर्वसाधारण की भलाई के लिए प्रतिष्ठित है? एक महान् राजा अपने सतोगुण की वृत्तियों तक से चौकस रहता है, कुछ ग्रंथकारों के समान मेरा यह कहना नहीं है कि सर्व-साधारण का सतोगुण राजाओं के लिए गुण नहीं है। ऐसा सिद्धान्त तो गंभीर विचार न करने वाले राजनीतिज्ञों का है। भलाई, मित्रता, कृतज्ञता आदि राजा के लिए भी गुण ही हैं पर बुद्धिमान् राजा आंख मूंद कर इन्हीं की प्रेरणा पर नहीं चलता। वह इन गुणों को धारण करता है और परस्पर के (ख़ानगी) व्यवहार में उनका पालन करता है पर राजकाज के व्यवहार में वह केवल न्याय और पक्की राजनीति का ध्यान रखता है। क्यों? इस लिए कि वह जानता है कि ' राज्य मुझे समाज के सुख के लिए दिया गया है अतः मुझे राज-शक्ति का प्रयोग करने में अपना सुख वा संतोष न देखना चाहिए "। वह अपनी भलमनसाहत को बुद्धि के अधीन रखता है। वह अपने मित्रों को जो लाभ पहुंचाता है वह निज की ओर से (राज्य की ओर से नहीं)। वह राज्य की जमहें और नौकरियों को योग्यता के अनुसार देता है। राज्य की ओर से वह जो कुछ इनाम देता है वह राज्य की सेवा के लिए, सारांश यह कि वह सर्वसाधारण की शक्ति सर्वसाधारण ही की भलाई में लगाता है।

" इसी शक्ति के सहारे पर राजा क़ानून वा शास्त्र की मर्य्यादा का रक्षक होता है। जब कि उसका यह धर्म है कि वह उस मर्य्यादा को भंग करने वाले प्रत्येक धृष्ट मनुष्य को रोके तब क्या उसके लिए यह उचित होगा कि वह स्वयं उसे पद-दलित करे ?

" जब तक जो क़ानून वा नियम हैं तब तक राजा को उनका पालन और उनकी रक्षा करनी चाहिए। ऐसी सर्वसाधारण की शांति के मूल और राजशक्ति के दृढ़ आधार हैं। जिस अभागे राज्य में मनमानी शक्ति का अधिकार है वहां किसी बात का ठिकाना नहीं, बलवा, उत्पात जो न चाहे सो हो जाय। अत: राजा का धर्म और लाभ इसी में है कि वह क़ानून वा नियम का पालन करे, स्वयं उसके अधीन हो। यह न कहना चाहिए कि राजा राज्य में प्रचलित क़ानून के वश में नहीं है। सब जातियों में ठीक इसका उलटा सिद्धान्त बर्त्ता जाता है अर्थात् यह कि राजा कानून के आधीन है। यद्यपि चापलूस समय समय पर इस (सिद्धान्त) के विरुद्ध चक्र चलाते रहते हैं पर बुद्धिमान् राजा देवता के समान उसका आदर करते हैं "

अब मैं मनु के दो एक वाक्य उद्धृत करता हूं—उनका वचन है " राजा को प्रजा का पालन उसी प्रकार करना चाहिए जैसे पिता पुत्र का करता है "।

" राजा भले मानसों को उचित पुरस्कार और दुष्टों को उचित दंड दे। न्याय का उल्लंघन उसे कभी न करना चाहिए।"

"जो राजा दंड के योग्य मनुष्य को छोड़ता है और दंड के अयोग्य मनुष्य को दंड देता है वह अन्यायी है। न्यायी वही है जो शास्त्र की व्यवस्था के अनुसार दंड देता है"॥

इन सब से प्रकट है कि राजाओं को कठिन धर्म्म का पालन करना रहता है, उन्हें बड़े बड़े सिद्धान्तों और नियमों पर चलना रहता है। उन्हें बनैले पशुओं की तरह मनमाना नहीं चलना रहता। उनका सब से बड़ा कर्तव्य उस प्रजा के सुख की वृद्धि करना है जिस के ऊपर परमात्मा ने उन्हें प्रतिष्ठित किया है।

प्रजा के सुख की वृद्धि करना इस बात को मोटे तौर पर समझ लेना तो बहुत सहज है पर आज कल के समय में इसको पूरा कर दिखाना गहरे मनन और स्वार्थ-त्याग का काम है, क्योंकि आज कल लोगों को न जाने कितनी तरह की भलाइयां चाहिएं और शासन-पद्धति भी एक खासी विद्या हो गई है जो बिना सीखे नहीं आती। सुन्दर शासन के नियमों और सिद्धान्तों को ध्यान पूर्वक सीखना पढ़ना पड़ता है। अस्तु, राजाओं के लिए इतना ही बस नहीं है कि वह यह कह कर कि "मैं जानता हूं कि प्रजा का पालन करना मेरा धर्म है" बिना कुछ सीखे पढ़े अपनी मनमानी मौज वा समझ के अनुसार जो जी में आवे करने लगे। बात यह है कि राजा को भी अपना काम सीखना पड़ता है और उसके गूढ़ नियमों और सिद्धान्तों के अनुसार उसे करना पड़ता है। जो राजा इन नियमों और सिद्धान्तों को नहीं मानता और उन पर नहीं

चलता वह उस माँझी के समान है जो बिना पतवार की नाव चलाता है।'

मैं आगे उन पत्रों के कुछ अंशों को दूंगा जो अवध की नवाबी से सम्बन्ध रखते हैं।

मैं ने इस बात पर बहुत जोर दिया है कि प्रजा के जीवन, धन आदि की रक्षा करना राजा का धर्म है और इस धर्म के पालन के उपाय भी बतलाए हैं। अवध के नवाब इस बात में बहुत चूके और यही कारण था कि उनका राज्य अंगरेजी राज्य में मिला लिया गया।

अवध के रेज़िडेंट ने लिखा है—"मैं ने बहुतेरा कहा पर हज़रत सलामत (नवाब वाजिद अलीशाह) राज काज के सब व्यवहार उन्हीं निकम्मे और अयोग्य कुपात्रों के ऊपर छोड़े हुए हैं, अपना सारा समय भोग विलास और धूमधड़क्के में बिताते हैं और अपने उच्च कर्त्तव्य के पालन में वैसी ही बेपरवाही दिखाते हैं। उनके राज्य के सब भागों में धन प्राण की वैसी ही अरक्षा बनी है और सब मुहकमों में वैसा ही कुप्रबंध और वैसी ही अंधेर फैली हुई है"।

दूसरे स्थान पर रेज़िडेंट फिर लिखते हैं—"यह कोई अचंभे की बात नहीं है कि अधिकार पा कर जवान नवाब साहब क्षुद्र लोगों के साथ में पड़ कर और उतनी ही शिक्षा पाकर जितनी देशी राजकुमार पाते हैं यह समझने लगें कि संसार में मुझे जो चाहे सो करने का सब से बढ़ कर सुबीता मिला है और बादशाह की इच्छा को रोकनेवाला कोई नियम वा बंधन नहीं"।

आगे चल कर रेजिडेंट बड़े लाट साहब को लिखते हैं "अदालत और कहीं तो हैं नहीं राजधानी में हैं, सोभी किसी काम की नहीं"।

इसका फल यह था कि अवध में न्यायालय की दशा बहुत ही बुरी थी। देखना चाहिए कि अंगरेज़ सरकार ने एक मामले की ओर कैसा ध्यान दिया जिस में एक आदमी मेल मुलाक़ात के ज़ोर से सज़ा से साफ़ बच गया यद्यपि इस बात का पक्का सबूत था कि उसने हत्या की है। उस अवसर पर भारत सरकार ने लखनऊ के रेज़िडेंट को इस प्रकार लिखा--

"आप बादशाह से भेंट करें। आप हज़रत सलामत को सूचित करें कि लखनऊ में अभी जो यह घोर अन्याय हुआ है कि साफ़ सबूत रहने पर भी हत्यारा छोड़ दिया गया इस पर गवर्नर जनरल साहब बहुत ही असंतुष्ट हैं। आप यह भी कहें कि बादशाह के राज्य में ऐसे ऐसे मामले बराबर हो रहे हैं जिनका फल यही होगा, जैसा कि उन्हें कई बार चेताया जा चुका है, कि बादशाही अधिकार बिलकुल ले लिया जाय"।

रेजिडेंट ने यह भी शिकायत की कि अवध में न्याया-लयों की ठीक व्यवस्था न होने के कारण अंगरेज़ सरकार की जो प्रजा वहां है वह भी कष्ट पा रही है। जब कि अवध में कुप्रबंध के कारण अंगरेज़ी प्रजा कष्ट पा रही है तब अंगरेज़ सरकार चुप नहीं रह सकती।

रेज़िडेंट ने साफ़ लिखा कि "अवध में पुलिस का कोई ठीक प्रबन्ध ही नहीं है। वर्तमान राज्य प्रणाली में अवध में

धन और प्राण की रक्षा का लेश भी नहीं है। देश के इस भाग में बिना बहुत से हथियारबन्द आदमी साथ लिए लोगों का रास्ता चलना असम्भव है।"

मैं समझता हूं कि मैं ने जितनी बातें लिखी हैं और जितने दृष्टान्त सामने रक्खे हैं उनसे यह बात मन में अच्छी तरह बैठ गई होगी कि अच्छी पुलिस रखना और अच्छे न्यायालयों का स्थापित करना कितना आवश्यक है। इनके बिना धन, प्राण, और स्वतंत्रता की रक्षा हो नहीं सकती। और बिना इस रक्षा के राज्य रह नहीं सकता, किसी न किसी दिन जायगा, चाहे जल्दी या देर में।

मैं देशी राज्यों का बड़ा भारी शुभचिन्तक हूं। मैं चाहता हूं कि वे बराबर बने रहें। अतः मेरा कहना है कि राजा महाराजा इन सब बातों को स्वयं ही मन में धारण कर के न रह जायँ बल्कि जैसे हो तैसे इन्हें अपने सन्तानों को भी बतलावें और साथ ही ऐसा उपदेश दें कि उनके सन्तान भी अपने सन्तानों को इसी प्रकार बतलावें जिसमें इन बातों का तार न टूटे, पीढ़ी दर पीढ़ी ये बातें मन में बैठती रहें। देशी रजवाड़े जब तक अपने राज्य में धन, प्राण और स्वतंत्रता की रक्षा बनाए रक्खेंगे तब तक वे अचल रहेंगे।

स्वास्थ्य—राज्य का दूसरा बड़ा कर्तव्य जहां तक हो सके प्रजा के स्वास्थ्य की रक्षा करना है। समाज के प्रत्येक व्यक्ति का स्वास्थ्य अधिकतर इसी पर निर्भर है-अर्थात् उसके भोजन, वस्त्र, व्यायाम, चिकित्सा आदि पर। हर एक को

भला चंगा रहने की स्वाभाविक इच्छा होती है इस से वह अपने स्वास्थ्य का ध्यान रखता ही है। पर सर्वसाधारण के स्वास्थ्य से सम्बन्ध रखनेवाली बहुत सी ऐसी बातें हैं जिनका प्रबन्ध एक एक व्यक्ति नहीं कर सकता। वे ऐसी बातें हैं जिनका प्रबन्ध राज्य ही की ओर से हो सकता है। यदि राज्य उनका प्रबन्ध अपने हाथ में न लेगा तो उनका प्रबन्ध होगा ही नहीं। मैं इन बातों में जो मुख्य मुख्य हैं उन्हें बतलाता हूं।

जहां बहुत से लोग पास पास बसते हैं जैसे शहरों और क़सबों में वहां सफ़ाई का सब से पहले ध्यान रखना चाहिए। गलियों में से गलीज़ और कूड़ा करकट दूर होना चाहिए। नल दुरुस्त रहने चाहिएं। अच्छी ताज़ी हवा खूब आनी चाहिए, इत्यादि। यही सब स्वास्थ्य-प्रबन्ध कहलाता है। इस के सिवा लोगों के आराम, सुबीते और रक्षा आदि के लिए भी अनेक प्रबन्ध रहें। जैसे गाड़ी घोड़े आदि आने जाने के लिए अच्छी अच्छी सड़कें हों। सड़कों पर छिड़काव हो, रोशनी हो। आग बुझाने की कलें हर समय तैयार रहें।

सर्वसाधारण के स्वास्थ्य के लिए एक और आवश्यक बात यह है कि लोगों को नित्य के ख़र्च के लिए साफ़ और काफ़ी पानी मिले। गरम देशों के लिए तो यह एक बड़ी भारी न्यामत है। जो राजा महाराजा इसका प्रबन्ध करेंगे उन्हें बहुत दिनों तक लोग आशीर्वाद देंगे।

सर्वसाधारण की स्वास्थ्य-रक्षा के लिए यह भी आवश्यक है

कि नगर की घनी बस्ती में रहनेवाले लोगों के लिए कुछ खुली और सुहावनी जगहें हों जहां वे गाड़ी घोड़े पर हवा खा सकें वा पैदल टहल सकें और जहां वे सन्ध्या सबेरे अपने अवकाश का समय बितावें जिससे उनके स्वास्थ्य को लाभ पहुंचे।

सर्वसाधारण की स्वास्थ्यरक्षा के लिए टीका लगाने का प्रबन्ध भी होना चाहिए जिससे लोग शीतला के भयानक रोग से बचे रहें।

लोगों की स्वास्थ्य रक्षा का एक उपाय यह भी है कि बस्तियों के बीच में अस्पताल और औषधालय स्थापित हों जहां रोगियों को सहज में दवाएं मिल सकें, उन के रोग की देख भाल हो सके।

जिस राज्य को अपनी प्रजा के सुख की चिंता होती है वह इन सब बातों का प्रबन्ध करता है। ऐसी बातों में जो रुपया खर्च होता है वह सफल ही होता है। प्रजा का यह स्वत्व है कि उसके स्वास्थ्य की इस प्रकार रक्षा की जाय। जो राजा अपनी प्रजा का पालन करता है वह लोगों की स्वास्थ्य-रक्षा का पूरा प्रबन्ध रखता है।

इस सम्बन्ध में मुझे यही कहना है कि राज्य की ओर से लोगों का स्वास्थ्य बढ़ाने, रोग दूर करने और क्लेश हटाने के लिए जो कुछ किया जायगा वह सुराज्य का लाभ समझा जायगा। अच्छा राजा सर्वसाधारण के स्वास्थ्य का बहुत ध्यान रखता है जो कि सर्वसाधारण के सुख का प्रधान अंग है और राजा का प्रधान कर्त्तव्य है।

पर इस बात का भी ध्यान रहना चाहिए कि सर्व साधारण का स्वास्थ्य बढ़ाने की चिन्ता में कहीं राजा महा-राजा व्यर्थ एक-एक आदमी की स्वतंत्रता में न बाधा डालें। स्वतंत्रता एक बड़ी अनमोल वस्तु है। किसी पर यह ज़ोर न डालना चाहिए कि तुम झख मार कर यही भोजन करो, यही दवा खाओ, या यही कसरत करो। इन सब बातों को तो हर एक आदमी अपना आप समझ बूझ लेगा। राज्य की कार्रवाई तो उन्हीं मामलों तक रहनी चाहिए जिनमे मोटे तौर पर सब की भलाई है- जैसे सफ़ाई कराना, अच्छे नल लगवाना, साफ़ पानी पहुंचाना, अस्पताल खोलना, टीका लगाने का प्रबन्ध करना इत्यादि, इत्यादि। ऐसे मामलों में राज्य जो कुछ करता है वह समाज की ओर से और समाज के भले के लिए।

इस ढंग से चलने में भी राज्य को यह ध्यान रखना चाहिए कि वह कहीं लोकोपकार करने की झोंक में बहुत न बढ़ जाय। लोगों की विद्या-बुद्धि की जो वर्तमान अवस्था है और उसके अनुसार उनके जो विचार हैं उनसे बहुत आगे न बढ़ जाय। किसी मामले में राज्य को कहां तक बढ़ना चाहिए और कहां तक जाना चाहिए इसका विचार समय समय पर यह देख कर करना चाहिए कि किसी कार्रवाई से लोगों की भलाई कितनी होगी और लोगों की ओर से विरोध कितना होगा।

मैं ऊपर कह चुका हूं कि स्वास्थ्य के मामले में व्यर्थ एक एक आदमी की स्वतंत्रता में बाधा न पड़ने पावे। पर राज्य यह कर सकता है कि बिना लोगों की स्वतंत्रता में बाधा डाले अपनी राय प्रकाशित करे। जैसे यदि हैज़ा फैला हो तो स्वास्थ्य-विभाग द्वारा राज्य की ओर से लोगों को यह सूचना दी जाय कि इन इन युक्तियों से हैजे से बच सकते हैं ये ये दवाएँ हैजे में उपकारी पाई गई हैं तथा इन इन उपायों से हैजे का फैलना रुक सकता है।

जब कभी हैज़ा, मरी, शीतला आदि रोग फैलें तो राज्य को उनकी रोक और चिकित्सा के लिए विशेष प्रबन्ध करना चाहिए। जिन जिन स्थानों में ये रोग फैले हों वहां कुछ अधिक वैद्य डाक्टर तैनात कर के भेजे जांय। वहां के लोगों को दवा आदि का अधिक सुबीता कर दिया जाय। यदि स्वास्थ्य-विभाग प्रस्ताव करे कि यहां ये ये कार्रवाइयां हों तो राज्य को चाहिए कि उन्हें चटपट मंजूर कर ले।

सर्व साधारण के स्वास्थ्य के सम्बन्ध में स्वास्थ्य-विभाग ही की सम्मति पर राज्य को चलना चाहिए।

प्रजा का प्राणरक्षा—ऊपर कहा जा चुका है कि राजा का कर्तव्य प्रजा का स्वास्थ्य बढ़ाना है। स्वास्थ्य-वृद्धि के मुख्य मुख्य उपाय भी बतालाए जा चुके हैं। राजा का दूसरा भारी कर्तव्य यह है कि जहां तक हो सके प्रजा को भरपूर भोजन इत्यादि प्राप्त करने का सुबीता कर दे। यह प्रत्यक्ष है भरपूर भोजन के बिना लोग सुखी नहीं रह सकते।

सब से पहले तो यह कहना है कि राज्य इस विषय में कुछ अधिक नहीं कर सकता। बहुत कुछ तो लोगों के निज के परिश्रम के ऊपर है। समाज के प्रत्येक व्यक्ति को अपने और अपने परिवार के लिए कोई न कोई काम करना पड़ता है और उसके द्वारा जीविका प्राप्त करनी पड़ती है। प्रकृति ने हर एक के लिए भोजन इतना आवश्यक रक्खा है कि वह आप अपने भोजन के लिए भर सक सब कुछ करता है इसके लिए उस पर कोई ज़ोर डालने की ज़रूरत नहीं, इस विषय में तो स्वाभाविक प्रवृत्ति ही पूरा काम करती है।

स्वाभाविक प्रवृत्ति केवल भोजन ही प्राप्त करने के लिए नहीं बल्कि सुख पहुंचानेवाली और बहुत सी वस्तुओं को प्राप्त करने के लिए उभाड़ती है। अब राज्य का धर्म यह है कि इस प्रवृत्ति को उचित स्वच्छन्दता के साथ काम करने दे। राज्य इस बात का ध्यान रक्खे कि इस स्वाभाविक प्रवृत्ति में मनुष्यों की उत्पन्न की हुई कोई बाधा वा रुकावट न पड़ने पावे। राजा को यह कर्त्तव्य साफ़ साफ़ समझना और दृढ़ता के साथ पूरा करना चाहिए।

अब यहां पर यह देखना है कि राजा को क्या करना चाहिए और क्या न करना चाहिए कि इस स्वाभाविक प्रवृत्ति के अनुसार पूरा पूरा कार्य्य हो और उसका अच्छा फल हो।

जैसा मैं पहले कह चुका हूं समाज के प्रत्येक व्यक्ति में अपने सुख के साधन इकट्ठे करने की स्वाभाविक प्रवृत्ति होती

है। इसी प्रवृत्ति के अनुसार वह धन कमाने के लिए और एक पूरा प्रयत्न करेगा। राज्य को चाहिए कि धन, प्राण, शरीर और स्वतंत्रता की रक्षा कर के इस स्वाभाविक प्रवृत्ति को भी भरपूर रक्षा करे। इन प्रयत्नों के लिए पूरी राहें खोल दे और कमाने वाले को उस धन का सुख भोगने दे। यदि धन, प्राण, शरीर और स्वतंत्रता की रक्षा न रहे तो क्या हो, सोचिए तो, बहुत से लोग मन में यही कहें—"मैं धन क्यों कमाऊँ और कमा कर क्यों बचाऊँ जब कि इस बात का कोई ठिकाना ही नहीं कि मैं कब मार डाला जाऊँ, घायल कर दिया जाऊँ, क़ैदखाने में डाल दिया जाऊँ, या लूट लिया जाऊँ"।

इससे सिद्ध हुआ कि धन, प्राण, शरीर और स्वतंत्रता की रक्षा समाज के धनोपार्जन और धनसंचय के लिए आवश्यक है। लोगों को किसी बात का डर नहीं रहना चाहिए।

इस बात को थोड़े और ब्योरे के साथ मैं कहता हूं। लोगों को यह डर न रहना चाहिए कि हम शहर में, दिहात में वा सड़क पर लूट लिए जायंगे। सेठ साहूकार अपना रुपया अपने पास बे खटके रख सकें। किसान अपने अनाज का ढेर बे खटके रख सकें। एक तरकारी बेचनेवाली ग़रीब बुढ़िया को भी इस बात का खटका न रहे कि मेरी तरकारी कोई छीन लेगा। सारांश यह कि छोटे बड़े, ग़रीब अमीर सब को इस बात का निश्चय रहे कि हमारी सम्पत्ति हमारे पास रहेगी और हम उसका सुख उठावेंगे। लोगों को इस बात का कुछ भी खटका

न रहे कि हमारे साथ ज़बरदस्ती होगी, हमें कोई धोखा देगा, हमें झूठे मामले मुकदमों में फंसेंगे, हमारे साथ राजा कोई मनमानी कार्रवाई करेगा।

ये सब बातें उन उपायों से प्राप्त हो सकती हैं जिन्हें मैं पहले कह चुका हूं अर्थात् शहरों और गावों में अच्छी पुलिस रखने से, योग्य अदालतों को बैठाने से और अच्छे अच्छे क़ानून जारी रखने से।

प्रजा के सुख सम्पत्ति की वृद्धि—राज्य को धन की बढ़ती के लिए और भी बहुत सी बातें करनी चाहिए जिनमें से कुछ मैं आगे बतलाता हूं।

राज्य के लोगों को अपने धन का पूरा उपभोग स्वच्छन्दता पूर्वक अर्थात् बिना व्यर्थ की रुकावट वा भय के करने देना चाहिए जैसे, किसी के लिए यह रोक न होनी चाहिए कि वह गाड़ी घोड़े पर चढ़ कर न चले। किसी को सड़क के किनारे भारी मकान बनाने से न रोकना चाहिए। इसी प्रकार, कोई बढ़ियां कपड़े वा क़ीमती गहने पहनने से न रोका जाय। सारांश यह कि लोगों को इस बात की पूरी स्वतंत्रता रहे कि वे जिस प्रकार चाहें अपने धन को भोगें वा दिखावें। राजा महाराजा अपनी प्रजा को जितना ही सुखी देखें उतना ही उन्हें सुखी होना चाहिए।

एक बड़ी भारी बात और है। हमारे यहां के लोग अधिकांश खेती ही पर निर्वाह करते हैं। धरती धन की

देनेवाली है। किसान भूमि पर परिश्रम करते हैं और भूमि उन्हें फल देती है। इससे सिद्ध हुआ कि भूमि के सम्बन्ध में और किसानों के सम्बन्ध में जो राज्यप्रबन्ध होगा उसका प्रजा के सुख के साथ बहुत कुछ लगाव होगा।

यह स्मरण रखना चाहिए कि अधिकांश लोग जो स्थिर भाव से देश में बसे हैं किसान हैं अर्थात् खेती का काम करते हैं। जिस प्रकार वह भूमि जिसे वे जोतते हैं अचल है उसी प्रकार वे भी अचल हैं। अधिकतर किसान जब तक उन पर लगातार ज़ुल्म न हो अपनी भूमि को छोड़ने का कभी विचार नहीं करते। किसान हमारे यहां की स्थिर जन-संख्या के एक प्रधान अंग हैं और जो फ़सल वे हर साल पैदा करते हैं वह हमारे देश के धन का एक प्रधान भाग है। इसी से रैयत और भूमि के सम्बन्ध में बहुत ठीक प्रबन्ध रहना चाहिए।

किसानों को सुखी रखने और भूमि से धन की बढ़ती करने के लिए यह आवश्यक है कि ज़मीन की मालगुज़ारी बहुत ज्यादा न हो, इतनी जितने में रैयत अपना और अपने बालबच्चों का पालन सुख से कर सके। बहुत सी देशी रियासतों में इस सिद्धान्त का पालन ठीक ठीक नहीं होता है। बहुत सी रियासतें रैयत से जहां तक हो सकता है मालगुज़ारी ऐंठती हैं और इससे जनसंख्या का एक बड़ा भाग दरिद्र हो जाता है। यह बात उस मूल सिद्धान्त के बिलकुल विरुद्ध है जिसकी ऊपर चर्चा हुई है अर्थात् राज्य का पहला उद्देश प्रजा के सुख की वृद्धि करना है।

दूसरी बात जो प्रजा को सुखी करने और भूमि से धनोपार्जन की वृद्धि करने के लिए आवश्यक है वह यह है कि किसानों के क़ब्ज़े में काश्त अच्छी हो। किसानों को यह पूरा विश्वास रहे कि जब तक रियासत को लगान बराबर देते जायंगे तब तक हम बेदख़ल न किए जायंगे। किसानों को यह भरोसा रहे कि यदि हम लगान बराबर समय पर देते जायंगे तो ज़मीन हमारे क़ब्ज़े में पीढ़ी दर पीढ़ी चली जायगी। बुद्धि से भी यह बात ठीक ठहरती है और अनुभव से भी यह बात पाई गई है कि क़ब्ज़े का ठीक ठिकाना न रहने से खेती की वृद्धि नहीं हो सकती।

एक और बात जो प्रजा को सुखी करने और भूमि से धन बढ़ाने के लिए आवश्यक है वह यह है कि जब किसानों की पूंजी और परिश्रम लगने से भूमि की उपज बढ़ जाय तब राज्य को उसके कारण अपना कर बढ़ा कर किसानों को उस उचित फल से वञ्चित न करना चाहिए जो उन्हें अपनी पूंजी और परिश्रम के कारण प्राप्त हुआ है। यदि रियासत ऐसा करेगी तो किसान कहेंगे कि हमें क्या पड़ी है कि भूमि को अधिक उपजाऊ करने के लिए अधिक परिश्रम और पूंजी लगावें। इससे भूमि की उपज बढ़ेगी नहीं चाहे घट भले ही जाय।

जब कि भूमिकर ऊपर लिखी व्यवस्था के अनुसार ठीक ठीक अर्थात् न बहुत थोड़ा न बहुत अधिक एक बार निश्चित

जो गया नव राजा महाराजों को और मनमाने बेगारी आदि जैसे गड्डी और ब्याह शादी आदि के नजराने न लगाने चाहिये।

एक बुराई और है जिसे बचाना चाहिए। प्रायः ऐसा हुआ है कि राजा महाराजों के पास साधु संन्यासी या ऐसे ही और लोग आए हैं और कुछ वार्षिक सहायता की प्रर्थना की है। राजा महाराजों ने क्या किया कि उन्हें सनद दे दी कि इन इन गावों और परगनों से असामी पीछे या हल पीछे इतना रुपया वसूल कर लिया करो। इस प्रकार का अधिकार देना बहुत ही बुरा है क्योंकि इससे किसानों को हानि पहुंचती है।

जिन उपायों से भूमि की उपज बढ़े या अच्छी हो उनको काम में लाना चाहिए।

खेती की उपज इन इन उपायों से बढ़ती है जैसे अच्छी जोताई, अच्छी खाद, और अच्छी निराई।

सिंचाई का प्रबन्ध करने से भी भूमि की फ़सल बहुत अच्छी हो सकती है। इस उपाय से जिस भूमि में पहले कोई मोटा अन्न होता था उस में ऊख हो सकती है, जहां १००) बीघे की फ़सल होती थी जहां ५००) बीघे की फ़सल हो सकती है। इससे किसानों को और सारी प्रजा को लाभ पहुंचेगा।

इस लिए राज्य को चाहिए कि सिंचाई के लिए ताल कुएं खुदवावे, नहर बनवावे तथा और जो प्रबन्ध हो सके करे।

किसी देश में भूमि की उपज बढ़ाने का एक और उपाय यह है ऐसे नियम बनें, जिनसे किसानों को अधिक ज़मीन सुभीते से और पक्के क़ब्ज़े के साथ मिले।

भूमि के अतिरिक्त धन के और भी मार्ग हैं। इनमें से मुख्य कारीगरी है। कारीगरी से बहुत से लोगों का पालन होता है। इससे कारीगरी को पूरा बढ़ावा देना चाहिए। यह आजकल और भी ज़रूरी है क्यों कि आबादी दिन दिन बढ़ रही है, इतनी ज़मीन कहां से आवेगी कि जिसमें सबका निर्वाह हो। जिन लोगों को खेती के लिए भूमि न मिल सके उनके लिए तरह तरह की कारीगरी का मैदान खुला रहना चाहिए।

अस्तु, लोगों की जीविका की बढ़ती करने और देश में धनोपार्जन की वृद्धि करने के लिए ये बातें आवश्यक ठहरीं—

(क) लोगों के प्राण, धन, शरीर और स्वतंत्रता की रक्षा रहे।

(ख) लोग अपने धन का पूरा सुख भोगने पावें।

(ग) भूमि धन का एक प्रधान मार्ग है इससे मालगुज़ारी बहुत अधिक न होनी चाहिए।

(घ) भूमि के अधिकार की पूरी रक्षा रहनी चाहिए।

(च) किसान अपनी पूंजी और अपना परिश्रम लगाकर ज़मीन की पैदावार में जो बढ़ती करें उस पर राज्य की ओर

से कर न बढ़ाया जाय, यदि बढ़ाया भी जाय तो बहुत दिनों के पीछे।

(छ) ज़मीन की ठीक ठीक नाप और बंदोबस्त हो।

(ज) नज़राना आदि मनमाने ऊपरी कर न लगाए जायँ।

(झ) साधु पुरोहित आदि को गाँवों में जाकर असामी पीछे या हल पीछे कुछ वसूल करने का अधिकार न दिया जाय।

(ट) पैदावार की रफ़्नी पर महसूल न लिया जाय। यदि लिया भी जाय तो थोड़ा।

(ठ) अनाज पर किसी तरह का महसूल न लगाया जाय।

(ड) भूमि की अच्छी जोताई, अच्छी खाद, और अच्छी निराई के लिए जहां तक सुबीते हो सकें कर दिए जायँ।

(ढ) सिंचाई के लिए कूंए आदि खुदवाए जायँ।

(त) सड़क और रेल बने जिससे मनुष्यों के और माल के आने जाने में ख़र्च कम पड़े।

(थ) किसनों को ऊसर ज़मीन सुबीते में और पूरे क़ब्ज़े के साथ मिले।

राज्य की इमारतें— राज्य की इमारतों को बनवाने का एक अलग मुहकमा चाहिए जिसका सब ऐसा योग्य अफ़सर हो जिसे इंजिनियरी की पूर्ण शिक्षा मिली हो।

इस मुहकमे का हिसाब रखने और जांचने का पूरा

प्रबन्ध चाहिए जिससे एक एक रुपए का ख़र्च दर्ज रहे और उसकी जांच हो।

इस मुहकमे को जितने रुपयों की आवश्यकता हो उतना रुपया झट मिलना चाहिए। यदि ऐसा न किया जायगा तो यह मुहकमा सुस्त पड़ जायगा। ऐसी किफ़ायत से कोई लाभ नहीं।

यदि कोई बड़ी, भड़कीली, और लागत की इमारत खड़ी करनी हो, विशेष कर राजधानी में, तो उसका ढांचा आदि तैयार करने के लिए अच्छे से अच्छे शिल्पी नियत किए जायँ। यह बहुत ही आवश्यक है। यदि इसका ध्यान न रक्खा जायगा तो लाखों रुपए व्यर्थ बरबाद होंगे और भद्दी इमारतें खड़ी कर दी जायँगी जिनसे बनानेवालों का अनाड़ी-पन ही प्रकट होगा।

इमारत बनवाने में आंख मूंद कर यूरोपियन ढंग की नक़ल न करनी चाहिए। यूरोपियन ढंग यूरप ही के लिए ठीक है। हम लोगों को वही ढंग काम में लाना चाहिए जो हमारे देश के अनुकूल हो और जिसका व्यवहार सब दिन से हमारे यहां चला आया है। बड़ोदे में कालिज महल और जमनाबाई अस्पताल अच्छे ढांचे पर बने हैं।

नियम यह होना चाहिए कि इमारत बनने का काम तब तक शुरू न हो जब तक कि ढांचा और तख़मीना पेश न किया जाय और मंज़ूर न हो जाय।

राज्य की ओर से जो काम बने वह अच्छे ढंग पर बने। काम पुख़्ता और सुन्दर हो जिसमें कई पीढ़ियों तक उसकी कदर रहे। इसमें जो ख़र्च और तरद्दुद हो उसे उठाना चाहिए।

जहां तक हो सके काम ठेके पर बनवाए जायँ। ठेके का नियम कई बातों में अच्छा है।

राज्य में से जो काम बनें उनसे राज्य के मज़दूरों और कारीगरों का गुज़ारा हो। बाहरियों की अपेक्षा इन्हें लगाना अच्छा है। बाहर से सामान मँगाने की अपेक्षा अपने राज्य से सामान लेना अच्छा है।

राज्य की इमारतों, सड़कों और पुलों की मरम्मत में जो ख़र्च लगे उसे लगाना चाहिए। यदि राजा महाराजा कोई नए काम न बनवावें तो जो पहले के बने हुए हैं कम से कम उनकी तो रक्षा करें। किसी रियासत की इमारतों का बेमरम्मत रहना उस रियासत के लिए बदनामी की बात है।

जहां मरम्मत का वार्षिक व्यय प्रति वर्ष बहुत घटता बढ़ता न रहता हो वहां सालाना मरम्मत का बँधा ख़र्च मंज़ूर होजाना चाहिए जिसमें बार बार का झंझट न रहे, समय का बचाव हो और मरम्मत भी ठीक वक़्त पर हो जाया करे।

अच्छे ढंग पर बनी हुई बड़ी और लागत की इमारतों की मरम्मत करने और उनको बढ़ाने में कुछ लाग का ख़्याल

रखना चाहिए कि जो काम नया बने वह पुराने के मेल में हो। देशी रियासतों में प्रायः इसका ध्यान नहीं रक्खा जाता।

कचहरी अदालत, जेल, स्कूल आदि की इमारतें सभ्य राज्य के लिए आवश्यक हैं। पर ये मुनाफे के काम नहीं हैं। इनसे लोगों के धन की बढ़ती सीधे नहीं हो जाती। पर ये अत्यन्त आवश्यक और ध्यान देने योग्य हैं।

कचहरी मुनाफ़े का काम नहीं है क्यों कि इससे न तो देश के धनोपार्जन में वृद्धि होती है और न व्यय की बचत होती है। सींचने का कूआं मुनाफे का काम है क्यों कि उस से फ़सल की बढ़ती होती है। इसी प्रकार सड़क बनाना भी मुनाफे का काम है क्यों कि इस से माल की रवानगी के खर्च में बहुत कुछ बचत होती है।

अस्तु, राज्य में मुनाफ़े के कामों को खूब बढ़ाना चाहिए। जितने हो ये काम अधिक होंगे उतनी ही देश की बढ़ती होगी। राजा महाराजा आज कल नए देश नहीं जीत सकते हैं, पर जो देश उनके अधिकार में हैं उनका मोल वे इन मुनाफे के कामों से बढ़ा सकते हैं।

इस देश में सब से मुख्य काम सींचने के लिए कुएँ तालाब खुदवाना और अच्छी अच्छी सड़कों का बनवाना है।

कम लागत में ऐसी कच्ची सड़कें बहुत सी बन सकती हैं जिन पर सूखे दिनों में बैलगाड़ी, छकड़े आदि मजे में चल सकें।

भारतवर्ष में पोखरे और तालाब बड़े काम के होते हैं। राज्य को चाहिए कि वह इन की मरम्मत रक्खे।

यदि बहुत ख़र्च न हो तो दलदंल की ज़मीन निकालने और ऊसर भूमि को उपजाऊ करने का भी राज्य को प्रबन्ध करना चाहिए।

मंदिर, धर्मशाला, तथा, ऐसी ही सब के काम आनेवाली और और इमारतों की मरम्मत का भी ध्यान राज्य को रखना चाहिए।

शिक्षा—में अब यहां कुछ ऐसे मोटे मोटे सिद्धान्तों का वर्णन करूंगा जिनके अनुसार राज्य के शिक्षा विभाग को चलना चाहिए।

अंगरेजी भाषा के द्वारा जो उच्च शिक्षा पाना चाहते हों उन्हें उस प्रकार की शिक्षा मिलने का प्रबन्ध होना चाहिए। जो लोग अंगरेजी भाषा के द्वारा उच्च शिक्षा पावेंगे वे समाज में अत्यंत उन्नत विचार के मनुष्य होंगे। वे उन्नति साधन में सब से अधिक सहायक होंगे, वे मूर्खता और अन्धविश्वास की बातों को दूर करने में सब से आगे रहेंगे। मेरा तो विश्वास क्या दृढ़ निश्चय है कि भारतीय जन समाज बिना ऊपर लिखी बातों के समावेश के जहां का तहां पड़ा रहेगा, एक डग आगे न बढ़ेगा।

अंगरेज़ी साहित्य, विज्ञान और दर्शन अंगरेज अच्छा पढ़ा सकते हैं। इससे स्कूलों और कालिजों में अंगरेज़

अध्यापक रहने चाहियें। स्वदेशानुराग के कारण, वा किफ़ायत के ख्याल से देशी आदियों ही को रखना ठीक नहीं है। देशी लोग अंगरेज अध्यापकों के सहायक के रूप में बहुत अच्छा काम करेंगे विशेष कर गणित और पदार्थ विज्ञान पढ़ाने में।

धर्म सम्बन्धी शिक्षा ज्ञान-मूलक हो, अर्थात् किसी विशेष मत की शिक्षा न दी जाय।

मेरी समझ में छोटी छोटी चुनी हुई पुस्तकों द्वारा स्कूलों में सर्वदेशीय सदाचार की शिक्षा होनी चाहिए। इसी प्रकार उस सदाचार की शिक्षा भी हो जिसका पालन राज्य में दंड भय से कराया जाता है। यह बहुत आवश्यक है कि लड़कों को आरंभ ही से यह बतलाया जाय कि कौन कौन सी नीयत, और कौन कौन से काम बुरे हैं और किनके लिए राज्य से दंड मिलता है। इसके सिखाने में थोड़ा ही समय लगेगा पर इसके द्वारा बहुत से युवा पुरुष ऐसे कर्मों से बचे रहेंगे जो नीति विरुद्ध हैं वा न्याय से दंडनीय हैं।

राजा महाराजों को चाहिए कि वे अपने यहां के सरदारों, सेठ साहूकारों पर इस बात का दबाव डालें कि वे अपने लड़कों को स्कूल भेजें।

ऐसे लोगों के अनुकरण के लिए राजा महाराजों को चाहिए कि वे अपने तथा अपने सम्बन्धियों के लड़कों को भी स्कूल भेजें।

यह स्मरण रखना चाहिए कि शिक्षितों को अधिक आश्रय देने से शिक्षा को बहुत उत्तेजना मिलती है। राज्य के भिन्न भिन्न विभागों के अधिकारियों को इस बात की ताकीद रहे कि उनके यहां जो जगहें ख़ाली हों उन्हें वे कार्य्य की उत्तमता के विचार से शिक्षितों को दें।

स्कूलों वा कालिजों में जो अपनी शिक्षा समाप्त कर चुके हों उनमें से कुछ को छात्रवृत्तियां दी जायं जिसमें वे प्रयाग, कलकत्ता, बम्बई आदि जा कर और ऊंची शिक्षा प्राप्त करें। छात्रवृत्तियां योग्य लोगों को दी जायं और कुछ उचित शर्तों के साथ।

राजा महाराजों को मुख्य मुख्य परीक्षाओं और इनाम बांटने के उत्सवों में सभापति का आसन ग्रहण करके तथा उत्साहपूर्ण व्याख्यान देकर अपनी रुचि विद्या की ओर दिखानी चाहिए। यह उनके राजकर्तव्यों में से है।

सर्व साधारण के लिए पुस्तकालय, सुबोध व्याख्यान तथा शिक्षा के ऐसे ही और और साधनों को सहायता पहुंचानी चाहिए और उनकी वृद्धि करनी चाहिए।

इन उपायों को धीरता के साथ काम में लाने से धीरे धीरे प्रजा की बुद्धि और विवेक की वृद्धि होगी और राज्य का बड़ा भारी कर्तव्य पूरा होगा।

राजा अपने राज्य में सब से बड़ा और शक्तिमान् पुरुष होता है इससे वह लोगों की चाल सुधारने के लिए बहुत कुछ कर सकता है। राजा के आचरण का प्रभाव छिन रता

और हर घड़ी पड़ता रहता है। राजा की बातचीत तक का बहुत कुछ फल होता है।

अत: राजा को बात बात में यह जताना चाहिए कि उसे सदाचार से प्रेम और बुराई से चिढ़ है। जब जैसा अवसर पड़े राजा को कोई न कोई बात इस तरह की कहनी चाहिए। जैसे श्रीमान् कहें—"मैं ऐसे लोगों को बिलकुल नहीं चाहता जो झूठ बोलते हैं" वा "मुझे ऐसे कर्म्मचारियों से बड़ी चिढ़ है जो घूस लेते हैं" वा "मुझे इधर उधर की लगानेवालों से बड़ी घिन है" अथवा "कोई यह न समझे कि मैं चालबाज़ियों से बहूंगा" इत्यादि। ये बातें इस ढंग से भी कही जा सकती हैं "जो सच्चे हैं मैं उनका सम्मान करता हूं" "मैं सच्चे और ईमानदार कर्मचारियों पर बहुत प्रसन्न होता हूं" इत्यादि॥

निश्चय समझिए बहुत से लोग राजा की ऐसी ऐसी बातों पर बड़ा ध्यान रक्खेंगे और उन्हें दूर दूर तक फैलावेंगे, ऐसी ऐसी बातों का बड़ा प्रभाव पड़ेगा। इनसे भले लोगों को उत्साह होगा और बुरे लोगों की चाल सुधरेगी। इनसे सबको चेतावनी मिलती रहेगी। इस प्रकार मैं समझता हूं कि राजा एक बड़े प्रभावशाली उपदेशक का काम कर सकता है। उसे थोड़े ही दिनों में लोगों की सत्प्रवृत्ति बढ़ाने का यश प्राप्त हो सकता है। यह समझ रखना चाहिए कि लोगों की प्रवृत्ति जितनी ही अच्छी होगी उतना ही शासन कार्य्य सुगम और अच्छा होगा तथा प्रजा का सुख बढ़ेगा।

संक्षेप यह कि राजा का यह बड़ा भारी कर्तव्य है कि वह अपने अधिकार और प्रभाव का प्रयोग सदाचार को बढ़ाने और बुराई को दबाने के लिए करे। वह जो कुछ कहे, जो कुछ करे, जो पद और प्रतिष्ठा प्रदान करे सब का लक्ष्य इस बड़े उद्देश्य की ओर हो।

महल—मैं अब महल के प्रबन्ध के विषय में कुछ कहना चाहता हूं। जिस प्रधान उद्देश से महल का सारा प्रबन्ध होना चाहिए वह यह है कि महाराज और उनके परिवार के लोग आराम और सुख से रहें तथा अपना आवश्यक राजसी ठाटबाट बनाए रहें।

इस काम में जो खर्च पड़े वह ठीकही है, और उसे उठाना चाहिए। यह ख़र्च यूरोपीय राज्यों की अपेक्षा एशिया के राज्यों में कुछ अधिक होता है क्योंकि वहां और यहां की चालढाल, रीति व्यवहार, और आचार विचार में भेद है। भारतवर्ष के लोग बहुत काल से तड़क भड़क को शक्ति का अंग समझते आए हैं। यहां तक कि ठाट बाट ही देखकर लोग शक्ति का अंदाज़ करते हैं।

पर साथ ही यह भी है कि महल का ख़र्च रियासत की आमदनी के हिसाब से हो। यदि यह ख़र्च हिसाब से अधिक होगा तो क्या होगा? प्रजा के सुख की वृद्धि करने के जो साधन हैं उन में कमी होगी, अर्थात् प्रजा के सुख का कुछ अंश न्योछावार हो जायगा। पर जहां तक हो सके प्रजा को सुखी करना यह राजा का पहला कर्तव्य है।

महल के एक एक विभाग के एक एक मद का ख़र्च बँधा वा निर्धारित हो। राजा साहब यह देखते रहें कि जिस काम के लिए जितना ख़र्च मुक़र्रर है उतना ही होता है। बड़ा भारी सिद्धान्त तो यह है कि जहां तक हो सके बहुत कम ऐसे मद हों जिनका ख़र्च बँधा वा मुक़र्रर न हो। जो ख़र्च बिना बँधा छोड़ा जायगा वह बराबर हर साल बढ़ता ही जायगा।

पर कुछ थोड़े से मद ऐसे अवश्य होंगे जिनका ख़र्च बाँधा नहीं जा सकता। ऐसे मदों की देखभाल राजा महाराजा स्वयं करें और किसी ख़ास ख़र्च को मंज़ूर करने का अधिकार अपने हाथ में रक्खें।

महल का वा ख़ानगी ख़ज़ाना अलग होना चाहिए। जो रुपया ख़ानगी ख़र्च के लिए मुक़र्रर हो वह समय समय पर रियासत के बड़े ख़ज़ाने से इसमें आया करे। इन दोनों ख़ज़ानों को गड्डबड्ड न करना चाहिए।

महल की सारी आमदनी और ख़र्च महल के ख़ज़ाने के नाम हो जिस में इस ख़ज़ाने की बही उठाते ही महल के सारे जमा ख़र्च का पता चल जाय।

रुपए पैसों के मामले में जहां तक हो सके लिख कर आज्ञाएं दी जांय, ज़बानी हुक्मों का कुछ ठीक ठिकाना नहीं। कुछ दिनों पीछे उन मे बड़ी बड़ी कठिनाइयां और सन्देह पड़ते हैं। लिपिबद्ध आज्ञा की उस समय विशेष आवश्यकता होती है जब कोई बड़ा और असाधारण ख़र्च आ पड़ता है।

तनख़ाह और देना बराबर ठीक समय पर चुकाया जाय। इससे रियासत के छोटे बड़े सब कर्म्मचारियों, व्यापारियों आदि को बड़ा सुबीता होगा।

महल के ख़ज़ाने से किसी को रुपया उधार न दिया जाय। महल का ख़ज़ाना बैंक नहीं है। इस सिद्धान्त पर बड़ी दृढ़ता से स्थिर रहना चाहिए, नहीं तो बहुत बुरी और सत्यानाशी रीति चल पड़ेगी।

महल का हिसाब किताब बड़े विश्वासपात्र और योग्य कर्म्मचारी के ज़िम्मे रहना चाहिए। हिसाब किताब लिखने में किसी प्रकार की ढिलाई न होने पावे। जो ख़र्च हो वह तुरंत टांक लिया जाय। जहां तक हो सके हिसाब में एक वर्ष के खर्च के अन्दर उस वर्ष का सारा ख़र्च आ जाय। यह न हो कि किसी एक वर्ष का ख़र्च दूसरे वर्ष में डाल दिया जाय। यदि इस बात का ध्यान रक्खा जायगा तभी एक वर्ष के ख़र्च का मिलान दूसरे वर्ष के ख़र्च से हो सकेगा।

हिसाब की जांच रियासत के अडिटर वा हिसाब जांचने वाले द्वारा बराबर होती रहे, किसी प्रकार की रोकटोक न रहने से बड़ी गड़बड़ी होगी।

महाराज का कोई खानगी ख़र्च रियासत के ख़ज़ाने से न लिया जाय और न उसके हिसाब में डाला जाय। महल का ख़र्च कम दिखाने के लिए ऐसा प्राय: किया जाता है। पर यह चाल धोखे की है और बंद होनी चाहिए।

साधारण नियम यह होना चाहिए कि किसी मद का

ख़र्च, जब तक किसी और मद से बचत न हो, न बढ़ाया जाय। यदि ख़र्च एक तरफ़ बढ़ना है तो दूसरी तरफ़ घटना चाहिए। यदि इस सीधे सादे सिद्धान्त का ध्यान बराबर रहेगा तो महल का औसत ख़र्च सदा बराबर रहेगा। मान लीजिए कि कोई चोबदार कुछ तनख़ाह बढ़ाने की प्रार्थना करता है। उसे आंख मूंद कर मंज़ूर न कर लेना चाहिए। चोबदार बहुत से रहते हैं। इनमें से यदि किसी की जगह ख़ाली हो तो या तो वह जगह तोड़ दी जाय या उसकी तनख़ाह घटा दी जाय। इस प्रकार जो रुपया हाथ में आवे उससे उस चोबदार की तनख़ाह, यदि आवश्यक हो, बढ़ा दी जाय। सारांश यह कि जब किसी की तनख़ाह बढ़ानी हो तो यह देख लेना चाहिए कि हाथ में कुछ रुपया फ़ाज़िल है, यदि हो तो उसी में से तनख़ाह बढ़ाई जाय। ऐसे मामलों में महल का हिसाब किताब रखनेवाले कर्म्मचारी से राय ली जाया करे और उसे यह आज्ञा रहे कि वह आयव्यय की अवस्था महाराज को सूचित करता रहे।

महीने महीने महल के ख़ज़ाने की बाक़ी की जांच होनी आवश्यक है। महल के दो वा तीन बड़े अफ़सर यह जांच खुद किया करें और यह निश्चय-पत्र महाराज को दिया करें कि बाक़ी की रक़म इतनी है जो हिसाब से मिलान खाती है। ये निश्चय पत्र एक बही में टांक लिए जायं और वह बही बराबर रक्खी रहे।

पण्डित, पुजारी, ज्योतिषी तथा इसी वर्ग के और लोग

सदा ख़र्च बढ़ाने की फ़िक्र में रहा करते हैं इससे उन पर कड़ा दबाव रहना चाहिए। व्यवहार उनके साथ अच्छा हो पर वे अपनी सीमा का उल्लङ्घन न करने पावें।

महल की रानियां भी राज्य की आर्थिक अवस्था का कुछ ध्यान नहीं रखतीं और बराबर किसी न किसी ढंग से ख़र्च बढ़ाया ही चाहती हैं। उनकी इस प्रवृत्ति को रोकना चाहिए।

इन रानियों तथा और लोगों को यह अच्छी तरह निश्चय करा देना चाहिए कि वे जो ऋण करेंगी उसका देनदार महल न होगा। पहले तो वे क़र्ज़ लें नहीं, यदि लें भी तो उसे उसी रुपए से चुकावें जो उन्हें ख़र्च के लिए मिलता है।

गोदान इत्यादि बहुत से दान हैं जो राजा महाराजों तथा उनके परिवार की ओर से दिए जाते हैं, ऐसे दानों में बहुत सी बुराइयां घुस गई हैं। राजा महाराजों को इनकी ओर ध्यान देना चाहिए और यह देखना चाहिए कि जो भारी भारी दान हों उनसे कोई सच्चा लाभ वा उपकार हो, विद्या की वृद्धि हो, दीनों का कष्ट दूर हो।

जवाहिरात वगैरह-राजा महाराजों के महल में बहुत से जवाहिरात और सोने चांदी की चीजें रहती हैं जिन पर उनकी पूरी निगरानी रहनी चाहिए।

इन सब की एक सूची महल के दफ़्तर में रहनी चाहिए। राजा महाराजों को चाहिए कि वे जा कर स्वयं एक बार

देख लें कि संग्रह में क्या क्या चीजें हैं। उनके इस देखने का बड़ा अच्छा फल होगा।

जब महाराज ने एक बार सब देख कर सहेज लिया तब कुछ लोगों को नियत करने का प्रबन्ध होना चाहिए जो समय समय पर उनकी जांच करते रहें और महाराज को निश्चय-पत्र देते रहें कि सब ठीक है। जांच करने वाले यह भी देख लें कि बहुमूल्य पत्थर और मोती इत्यादि बराबर वही हैं बदले नहीं गए हैं।

इन सब चीजों की ताली विश्वासपात्र मनुष्यों के हाथ में रहे। एक आदमी से काम न चलेगा, क्यों कि न जाने कब वह बीमार पड़े, मर जाय। इससे अच्छी यह होगा कि कई आदमियों की एक कमेटी बना दी जाय।

पहले जवाहिरात छोटी छोटी अंधेरी कोठरियों में इधर उधर बिखरे रहते थे। प्रबंध ढीला रहता था। अब भारी भारी चीजें लोहे की कोठरियों के भीतर अलग अलग संदूकों में रहती हैं। यह प्रबन्ध अच्छा है।

ये वस्तुएं पुरखों की संचित हैं इन्हें अच्छी तरह रखने में मर्य्यादा है। इनमें से व्यर्थ बहुत सी चीजें इनाम वा भेंट में न दी जायं। यदि कभी देना आवश्यक हो तो हलकी चीजें दी जायं।

जौहरी लोग नए जवाहिरात खरीदने के लिए राजा महाराजों से बड़ी लबी चौड़ी बातें करते हैं जिनसे उन्हें सावधान रहना चाहिए। वे सुन्दर सुन्दर नए केसों (खानों)

में जड़ाऊ गहने रनिवास में दिखाते हैं और अनेक ऐसी युक्तियां रचते हैं कि जिसमें रानियां उन्हें मोल लेने के लिए ज़ोर दें। कभी कभी तो वे ऐसे लोगों को घूस तक देते हैं जिनका रानियों पर कुछ ज़ोर रहता है। ऐसे फेरों में कभी न पड़ना चाहिए। ऐसी ही बातों में तो दृढ़ता दिखानी चाहिए। रानियों को समझा देना चाहिए कि इस प्रकार की चीजें तो महल में बहुत सी हैं अथवा महल में प्रस्तुत सामग्रियों से थोड़े दिनों में तैयार हो सकती हैं।

गाड़ी घोड़े, यथा महल के और सामान अच्छे और दुरुस्त रहें। साधारण नियम यह होना चाहिए कि जिन वस्तुओं का महाराज स्वयं व्यवहार करते हों वे बहुत अच्छे मेल की हों। क्योंकि बीस रद्दी गाड़ियों से दस अच्छी गाड़ियों का रखना अच्छा है। इसी सिद्धान्त का पालन महल की और और बातों में भी करना चाहिए। जैसे कि महाराज के जो अर्दली और नौकर चाकर हों वे चुने हुए और अच्छे कपड़े पहने हुए हों।

महल में स्वास्थ्य-रक्षा की बातों का पूरा ध्यान रहना चाहिए। बहुत से नौकर चाकर एकही बंद जगह में गंदगी से न रहने पावें।

राजा महाराजों के यहां बहुत सी अलभ्य और अद्भुत वस्तुएं रहती हैं। वे इधर उधर पड़ी न रहने पावें, एक जगह ठिकाने से रख दी जायं, जिस में राजा महाराजों को मालूम रहे कि कौन सी चीजें हैं और वे उन्हें काम में ला सकें।

महल में नित्य की बातों का लेखा रखने के लिए एक दिनचर्य्या या रोज़नामचे की पुस्तक रहे। इसमें जो बातें याद रखने लायक हों दर्ज कर ली जाया करें। ऐसी पुस्तक बड़े काम की होगी विशेषकर नज़ीर या दृष्टान्त रखने के लिए।

महल का जो अफसर या कामदार हो वह बहुत योग्य और निपुण हो। उसे महल के लिए मामूली ख़र्च करने, नौकरों को रखने छुड़ाने आदि का पूरा अधिकार रहना चाहिए।

महल का कामदार हर एक वर्ष के अन्त में महल के प्रबन्ध का एक विवरण या रिपोर्ट उपस्थित किया करे। यह रिपोर्ट बड़े काम की होगी।

राज्य का मंत्रि-मण्डल—राजा राज्य की शक्ति है और राज्य की सभा वह यन्त्र है जिसे वह शक्ति चलाती है। इन्हीं पर प्रजा के हित का भार है।

इस सभा या कचहरी को नीति-बल और बुद्धि-बल होना चाहिए। इस कचहरी का प्रधान अधिष्ठाता दीवान होता है अतः उसे बहुत योग्य होना चाहिए। उस पर महाराज का विश्वास होना चाहिए, प्रजा का विश्वास होना चाहिए और अंगरेज़ सरकार का विश्वास होना चाहिए। उसे शासन-कार्य्य में विशेषतः देशी राज्यों के शासन कार्य्य में निपुणता होनी चाहिए। यह निपुणता उसे यदि उसी रियासत में काम करते करते प्राप्त हुई है तो और भी अच्छी बात है।

रियासत की कचहरी में सदा कुछ ऐसे योग्य और नीति-परायण मनुष्य रहें जो शासन-कार्य्य में दक्षता प्राप्त कर चुके हों। इन्हीं में से समय समय पर दीवान चुने जाया करें तो बहुत ही अच्छा है।

यदि इस बात का ध्यान नहीं रक्खा जायगा तो जब जब दीवान की जगह ख़ाली होगी तब तब महाराज को बड़ी कठिनता होगी। अपनी रियासत के कर्म्मचारियों में किसी को योग्य न पा कर उन्हें किसी बाहरी आदमी को बुलाना पड़ेगा जो ठीक नहीं है।

अपरिचित व्यक्ति को दीवान बनाना राजा महाराजों के सुबीते की बात नहीं है। जिससे कभी की जान पहचान नहीं, जिस का स्वभाव और रंग ढंग मालूम नहीं, जो उस स्थान और वहां के लोगों को नहीं जानता, जिसे रियासत के भिन्न भिन्न स्थानों के शासनक्रम और ब्योरे से जानकारी नहीं, जिस को महाराज का इतना ज़ोर नहीं जितना बाहर के लोगों का, ऐसे आदमी को दीवान बनाना ठीक नहीं।

दीवान को अंगरेज़ी भाषा पर पूरा अधिकार होना चाहिए। इसके बिना किसी बड़ी रियासत का प्रबन्ध चार दिन भी नहीं चल सकता।

दीवान दृढ़ पर शान्तिप्रिय हो, न्यायी पर शीलवान् हो, तत्पर पर धीर हो, उत्साही पर विचारवान् हो, मान अपमान का ध्यान रखने वाला हो पर झगड़ालू न हो, महाराज को

प्रिय हो पर समय पर साफ़ बात कहनेवाला हो। वह शासन के प्रत्येक विभाग में उन्नति का पक्षपाती हो पर साथ ही उस में इतना विवेक हो कि जो बातें पुरानी, स्वाभाविक और उपयोगी हों उन्हें वह बनी रहने दे।

राजा महाराजों के लिए बिना भारी कारण के जल्दी जल्दी दीवान बदलना अच्छी नीति नहीं है। दीवान को यह विश्वास रहना चाहिए कि वह अपने पद पर कम से कम पांच वर्षों तक रहेगा। किसी राजा का जल्दी जल्दी दीवान बदलना दुर्बलता का लक्षण है।

दीवान के नीचे राज्य के जो और और विभाग हों उनके अधिकारी भी बहुत सोच समझ कर चुने जांय। उनमें अपना काम करने की पूरी योग्यता हो, वे अंगरेज़ी अच्छी तरह जानते हों। वे कई जातियों और धर्मों के हों।

भिन्न भिन्न विभागों के अधिकारियों के साथ अच्छा व्यवहार होना चाहिए। अच्छे प्रबन्ध और शासन के लिए उनकी प्रशंसा होनी चाहिए। राजा महाराजों का कभी कभी उचित प्रशंसा कर देना सो इनाम से बढ़ कर है क्योंकि प्रतिष्ठित लोग मान के भूखे रहते हैं।

अधिकारी और मंत्री लोग राजा के नौकर ही हैं। पर, उनसे कुछ कहने में चतुर राजा ऐसे शब्दों को बचाते हैं जिनसे हुकूमत टपके। उदाराशय लोग तो छोटे छोटे नौकर चाकरों के साथ भी ऐसा ही करते हैं।

रियासत की कचहरी का काम बहुत बड़ा है। उसमें व्यवस्था और नियम की बड़ी आवश्यकता है। देशी रियासतों में व्यवस्था और नियम प्रायः ढीले पड़ जाते हैं और तोड़ दिए जाते हैं। राजा महाराजों को ऐसा न होने देना चाहिए। व्यवस्था का यह मतलब है कि सारा काम कई उचित विभागों में बांटा जाय, एक एक कर्म्मचारी के ज़िम्मे एक एक विभाग कर दिया जाय और उस विभाग के काम को पूरा कराने के लिए उसके नीचे और कार्य्यकर्त्ता रक्खे जायं। मुहर्रिर से ले कर दीवान तक किसी न किसी के अधीन हों। ऐसी व्यवस्था के अन्तर्गत रियासत का सारा कारख़ाना आ जाय, उसका प्रत्येक अंग दूसरे अंग के अधीन काम करे। नियम का मतलब यह है कि कार्य्य विभाग की सब श्रेणियों में एक दूसरे की अधीनता बनी रहे।

केवल यही ढंग है जिससे बहुत से मनुष्य अपनी अपनी शक्तियों को दूसरों की शक्तियों के अनुकूल रखते हुए किसी बड़े उद्देश्य की सिद्धि में लगा सकते हैं। नियम और व्यवस्था के बिना सब बातें गड़बड़ रहेंगी। लोगों पर इस बात का कोई दबाव न रहेगा कि वे सदा एक उद्देश्य पर दृष्टि रख कर काम करें। यही नहीं कि उनके काम एक दूसरे के मेल में न होंगे बल्कि एक दूसरे के विपरीत होंगे।

राजा महाराजों को रियासत के कामों में नियम और व्यवस्था का पूरा ध्यान रखना चाहिए। 'क' नाम का कर्म्मचारी जो 'ख' नामक कर्म्मचारी के अधीन है, महाराज से

आ कर कहता है "मैं 'ख' की आज्ञा पर काम नहीं करना चाहता, मैं या तो महाराज की या कम से कम दीवान की आज्ञा पर चलना चाहता हूं"। ऐसा कभी न होने देना चाहिए। इसी प्रकार कोई मुहर्रिर अपने अफ़सर से छुट्टी न मांग कर सीधे महाराज के पास छुट्टी का प्रार्थना पत्र भेजता है। महाराज को ऐसा प्रार्थना-पत्र लौटा देना चाहिए और प्रार्थी से कहना चाहिए कि 'तुमने नियम विरुद्ध कार्य्य किया है। तुम अपनी अर्ज़ी अपने अफ़सर के पास भेजो।"

देशी रियासतों में दीवान और मंत्रियों के विरुद्ध गुम-नाम अर्जियां बहुत आया करती हैं। दीवान और मंत्री प्रतिष्ठित आदमी होते हैं इससे ऐसी अर्जियों पर बहुत समझ बूझ कर कार्रवाई होनी चाहिए।

साधारण नियम तो यह होना चाहिए कि जो चिट्ठियां गुमनाम या झूठे नामों से आवें उन पर कुछ ध्यान ही न दिया जाय।

राजा साहब को चाहिए कि वे अपने दीवान और भिन्न भिन्न विभागों के मंत्रियों पर विश्वास रक्खें और उन्हें सहारा दें तथा सर्वसाधारण पर यह बात प्रकट कर दें कि हम उन पर विश्वास रखते हैं और उन्हें हर बात में सहारा देते हैं। जहां इसके विरुद्ध लोगों की धारणा हुई कि चट भांति भांति के कुचक्र चलने लगेंगे, राज्य की सारी व्यवस्था शिथिल हो जायगी और हानि पहुंचेगी।

ऐसा प्रबंध करना चाहिए कि मंत्रियों मे मेल रहे। उन्हें इस लिए लड़ा देना जिस में उन्हें एक दूसरे का डर रहे अच्छी नीति नहीं है। यदि मंत्री बुरे आदमी हों तो उनकी चौकसी के लिए यह भद्दी युक्ति ठीक है। पर ऊपर अच्छे लोगों को ही मंत्री चुने जाने की व्यवस्था है। चोट्टे आपस में लड़ें, भले आदमी क्यों ऐसा करें।

राजाओं को तो चाहिए कि मंत्रियों में मेल बनाए रहे। जब देखें कि कुचक्री लोग उनमें फूट डालना चाहते हैं तब उन्हें रोकें।

मंत्रियों में मेल बढ़ाने और उन्हें एक साथ जवाबदेह बनाने के लिए यह प्रबंध करना चाहिए कि प्रत्येक मंत्री भारी मामले में अपने और सहयोगियों के साथ विचार करके तब सब की सम्मति से कोई बात स्थिर करे। इस ढंग से हर एक बड़े मामले पर पूरा पूरा विचार होगा और सब मंत्री एक दूसरे की कारवाई के जवाबदेह रहेंगे। तब कोई मंत्री यह न कह सकेगा कि अमुक मंत्री ने यह बुराई की है। इस प्रकार बुरी कारवाइयों की संभावना बहुत कम हो जायगी।

इस से एक लाभ और होगा। जब कि एक मंत्री किसी भारी मामले पर दूसरे मंत्रियों के साथ विचार किया करेगा तब हर एक मंत्री को न कि केवल अपने ही विभाग के काम से जानकारी रहेगी बल्कि और और विभागों के काम से भी जानकारी हो जायगी। ऐसा होने पर, यदि कभी किसी विभाग

का मंत्री न रहेगा तो जो उसके स्थान पर होगा वह और मंत्रियों से अपना काम बहुत जल्दी सीख लेगा।

राज्य के भिन्न भिन्न विभाग—रियासत की कचहरी में कई विभाग रहते हैं, जैसे, माल विभाग, सेना विभाग, न्याय विभाग और इञ्जिनियरी विभाग आदि।

माल विभाग का अधिकारी अपने कार्य्य के सारे ब्योरे और सिद्धान्त समझता हो। आमदनी के जितने द्वार हैं, जैसे चुङ्गी, आबकारी, जमीन, उसे उन सब की जानकारी रखनी चाहिए। इन सब के विषय में उसे इतनी बातें जाननी चाहिएं—१ प्रत्येक का पिछला वृतांत। २ उसकी वर्तमान अवस्था। ३ अंगरेजी राज्य में उसकी अवस्था ४। उस के ज्ञाताओं के निश्चित किए हुए सिद्धान्त। उसे अर्थ प्रबन्ध में निपुण होना चाहिए। पहले इस विभाग के जो अधिकारी रक्खे जाते थे उन्हें इन सब बातों का ज्ञान नहीं होता था। वे यह समझते थे कि प्रजा से जहां तक मालगुज़ारी ऐंठते बने ऐंठनी चाहिए। कहीं की प्रजा तो मालगुज़ारी के बोझ से दबती थी और कहीं ठीक ठीक मालगुज़ारी भी नहीं वसूल होती थी। तहसीलदार और इजारदार लोग मनमाने महसूल लगाया और बढ़ाया करते थे। इससे व्यापार की वृद्धि नहीं होने पाती थी।

इस विभाग से हज़ारों आदमियों को नित्य काम पड़ता है अतः इसका प्रबन्ध बहुत सन्तोषदायक होना चाहिए।

न्यायविभाग का अधिकारी बुद्धिमान् तथा क़ानून का

अच्छा जाननेवाला हो। वह न्याय के सिद्धान्तों तथा न्याय शासन के ब्योरों को अच्छी तरह समझता हो।

इञ्जिनियरी या स्थापत्य विभाग भी राज्य के बड़े काम का है। इसका अधिकारी या मंत्री भी बहुत योग्य होना चाहिए। वह अंगरेज़ी में निपुण हो तथा स्थापत्य विषय की पुस्तकें बराबर देखता रहता हो क्योंकि उसे इञ्जिनियर से लिखापढ़ी करनी रहती है।

तनख्वाह—पहले यह समझा जाता था कि राज्य का हर एक काम हर एक आदमी कर सकता है। इससे रियासत के लिए कर्म्मचारी मिलना कोई कठिन बात नहीं थी। जहां कुछ जगहें ख़ाली हुईं कि कोड़ियों आदमी टूट पड़ते थे और बहुत ही कम तनख़ाह पर नौकरी कर लेते थे।

बात यह थी कि पहले कर्म्मचारी लोग तनख़ाह के ऊपर बहुत रुपया पैदा करते थे। उनकी आमदनी इस प्रकार की थी जिसे आज कल शिक्षित लोग बड़ी घृणा की दृष्टि से देखते हैं। साफ़ बात यह है कि वे लोग घूस लेते थे। वे लोग नौकरी तनख़ाह के लिए नहीं करते थे प्रजा को लूटने के लिए करते थे, इसीसे थोड़ी तनख़ाह पर काम करते थे।

आजकल की अवस्था और है। उत्तम शासन अब बिना शिक्षितों के नहीं हो सकता है। अब रियासत की नौकरियां के लिए ऐसे शिक्षित पुरुषों की ज़रूरत है जिनमें काम की पूरी योग्यता हो और जो इतने खरे और ऊंचे विचार के हों

कि कभी अनुचित लाभ उठाने की ओर ध्यान ही न दें। पर जो अच्छी चीज़ चाहे वह अच्छा दाम लगावे। अतः देशी रियासतों को तनख़ाहें ज्यादा देनी चाहिएं।

देशी रियासतों को अपने यहां के कर्म्मचारियों की तनख़ाह निश्चित करने में एक बात का और ध्यान रखना चाहिए। अंगरेज़ी राज्य में ऐसे खरे और सुशिक्षित आदमियों की बड़ी मांग है। अतः जितना वेतन उन्हें अंगरेज़ी सरकार देती है उससे कम देशी रियासतों को न देना चाहिए।

अंगरेज़ी सरकार की नौकरी में पेंशन मिलती है। देशी रियासतों में नहीं। इस विचार से भी तनख़ाह अधिक होनी चाहिए।

अंगरेज़ी सरकार की नौकरी बड़ी पक्की होती है। जब तक कर्म्मचारी कोई भारी कुचाल न करे तब तक उसे किसी प्रकार का खटका नहीं, उसकी नौकरी बराबर बनी रहेगी। पर देशी रियासतों का ढंग कुछ और ही है। वहां नौकरी का कुछ ठिकाना नहीं। अच्छे से अच्छा काम करनेवाला कर्म्मचारी भी यह नहीं कह सकता कि वह बराबर रियासत में बना रहेगा। प्रायः यह देखा गया है कि जितना ही जो कर्म्मचारी योग्य और अच्छा काम करनेवाला होता है उतना ही महाराज उसे कम पसंद करते हैं क्योंकि अपने उच्च सिद्धान्तों के कारण वह झूठ मूठ इधर उधर का खुशामद तथा और और गंदे काम नहीं कर सकता। देशी रियासतों

को यहां सब बातें देख कर अच्छे और योग्य आदमी अंगरेज़ी राज्य की अपेक्षा यहां अधिक तनख़्वाह चाहते हैं।

अब हम यहां थोड़े में उस रीति की हानि और लाभ पर विचार करेंगे जिसके अनुसार देशी रियासतों में अंगरेज़ी सरकार के कर्म्मचारी बुलाए जाते हैं।

पहली बात तो यह है कि रियासत को ऐसे कर्म्मचारियों को उससे अधिक तनख़्वाह देनी पड़ती है जितनी वे सरकारी नौकरी में पाते हैं। उसके अतिरिक्त उनकी पेंशन की रक़म भी रियासत को भरनी पड़ती है।

वे जब होगा तब रियासत की नौकरी छोड़ कर अपनी सरकारी जगह पर वापस चले जायँगे।

यदि उनमें से कोई कुचाल करेगा और छुड़ा दिया जायगा तो रियासत को इस बात का ध्यान रखना पड़ेगा कि उसके छुड़ाए जाने का कारण ऐसा प्रबल हो जिससे अंगरेज़ी सरकार को सन्तोष हो जाय।

ऐसे लोग राजनीति में प्रायः कच्चे होते हैं क्योंकि अंगरेज़ सरकार के यहां वे बहुत छोटी जगहों पर रहते हैं। वे नीचे से ऊपर तक सरकारी राज्य के सारे ढांचे को नहीं समझे रहते।

दूसरी ओर जो देखते हैं तो अंगरेज़ी सरकार ने अपने यहां से कर्म्मचारी देने का जो सुबीता देशी रियासतों के लिए कर दिया है उससे लाभ भी कई दिखाई पड़ते हैं। देशी

रियासतों को कर्म्मचारी चुनने के लिए बहुत मैदान मिल जाता है। इसके सिवा उन्हें ऐसे सीखे सिखाए कर्म्मचारी मिल जाते हैं जो स्थानिक सम्बन्ध वा ईर्षा द्वेष से रहित होते हैं। ऐसे कर्म्मचारियों से रियासतों को बहुत लाभ पहुंच जाता है।

यहां दो एक बातों की चेतावनी भी आवश्यक है। राज्य के सब कार्य्यविभागों को बुराई से बचाए रखना पहला कर्तव्य है अत: देशी रियासतों को किसी ऐसे आदमी को अपने यहां न लेना चाहिए जो किसी भारी अपराध के कारण सरकारी नौकरी से अलग किया गया हो। ऐसे लोग बहुत कम तनख़ाह पर काम करने के लिए मुस्तैद होंगे। वे राजा महाराजों पर कई तरह का ज़ोर डालेंगे। कभी वे कहेंगे कि 'हम कुछ तनख़ाह नहीं चाहते केवल महाराज के साथ रह कर कुछ इस तरह के काम यों ही किया चाहते हैं, जैसे इधर उधर की बातों की ख़बर देना, मामलों में राय देना, अख़बारों में लिखना इत्यादि।' पर ऐसे लोगों को एक दम फटकार देना चाहिए।

ऐसे सरकारी नौकरों को रखना भी ठीक नहीं जो पेंशन पा चुके हों। जो सरकारी काम के लिए असमर्थ हैं वे देशी रियासतों का काम कैसे अच्छा करेंगे। हां यदि कोई बड़ा अनुभवी और योग्य मनुष्य हो और उसमें कार्य्य करने की पूरी शक्ति हो तो उसे ले लेना चाहिए।

पहले रियासत के नौकरों को तनख़ाह, ज़मीन, पालकी ख़र्च, इनाम इत्यादि कई तरह की रक़में दी जाती थीं। इस

से बहुत सी धोखे बाजी और गड़बड़ी होती थी। अब नौकरों को केवल नक़द तनख़ाह बँधनी चाहिए।

रियासत की नौकरियां—जब कि भिन्न भिन्न विभागों के अधिकारी योग्य चुने गए हैं तब उन्हें लोगों को मुकर्रर करने और तरक्क़ी देने आदि का पूरा अधिकार देना चाहिए। जुरमाना कर के मुअत्तल करने और बरख़ास्त करने का अधिकार भी उन्हीं के हाथ में रहना चाहिए। बिना इस अधिकार के वे सुन्दर प्रबन्ध और व्यवस्था नहीं रख सकते। इसका यह अभिप्राय नहीं कि वे अपने इस अधिकार का मनमाना प्रयोग करें।

किसी विभाग का अधिकारी ही यह ठीक ठीक जान सकता है कि उस विभाग की किसी जगह के लिए कैसी योग्यता चाहिए और किसी उम्मेदवार में वह योग्यता है वा नहीं। वही ठीक ठीक विचार सकता है कि उसके मातहतों में से किसे तरक्क़ी मिलनी चाहिए। अत: नौकरी आदि देनें के विषय में उसी की राय पक्की माननी चाहिए।

मूर्ख और स्वार्थी लोग राजाओं को सुझाते हैं कि नौकरी आदि देने का सारा अधिकार महाराज ही अपने हाथ में रक्खें, अधिकारियों पर न छोड़ें। चतुर राजा ऐसी सलाह को नियम और व्यवस्था के विरुद्ध समझ कभी नहीं मानते।

जब कि प्रधान उद्देश्य अत्यंत योग्य मनुष्यों ही को रखना और तरक्क़ी देना है तब इस उद्देश्य के विरुद्ध जो सिफ़ारिशें पहुंचे उन पर कुछ ध्यान न देना चाहिए, चाहे वे कहीं से आवें। ऐसी सिफ़ारिशें मित्रों वा सम्बन्धियों के यहां

से आ सकती हैं, सरकारी अफ़सरों के यहां से आ सकती हैं, पर राजा को अपने उद्देश्य पर दृढ़ रहना चाहिए।

रियासत के काम के कई विभाग वा मुहकमे होते हैं। प्रत्येक विभाग के लिए एक विशेष प्रकार की योग्यता चाहिए। अत: यह बात नहीं है कि जो आदमी एक विभाग के लिए उपयुक्त है वह अवश्य दूसरे के लिए भी उपयुक्त है। अत: कर्म्मचारियों की बदली एक विभाग से दूसरे विभाग में बिना समझे बूझे न कर देनी चाहिए। जैसे किसी माल के मुहकमे के अफ़सर को न्याय विभाग में चटपट न बदल देना चाहिए।

राजा महाराजा मुक़र्ररी वा तरक़्क़ी के लिए किसी प्रकार का नज़राना न लें। वे अपने किसी कर्म्मचारी को मुक़र्ररी वा तरक़्क़ी के लिए किसी से घूस न लेने दें। उत्तम राज्य शासन के लिए यह बड़ा भारी विघ्न है, इससे बचना चाहिए, जो कर्म्मचारी इस सिद्धान्त के विरुद्ध कोई कार्रवाई करे वह निकाल बाहर कर दिया जाय और यदि आवश्यक हो तो फ़ौजदारी सुपुर्द किया जाय।

अच्छे अच्छे पदों पर रक्खे जाने के लिए लोग और कई तरह की चालें चलते हैं। जैसे कोई महाराज से आ कर कहता है, "यह जगह मुझे मिल जाय तो मैं मालगुज़ारी चौगुनी कर दूं"। यदि महाराज रुपए के भक्त हुए तो बात में आ गए। फल क्या हुआ कि प्रजा को पीडा पहुंचने लगी। आय बढ़ाने का उत्तम उपाय यह नहीं है। आय वही ठीक

है जो सुराज्य के कारण हो, प्रजा के धन धान्य की वृद्धि के कारण हो, न कि गला दबाने से।

अंगरेज़ी सरकार का सम्बन्ध—यह तो प्रत्यक्ष है कि हिमालय से कन्याकुमारी तक और रंगून से पेशावर तक अंगरेज़ी सरकार ही का एकाधिपत्य है। इस आधिपत्य के अन्तर्गत अंगरेज़ी अमलदारी भी है तथा वे प्रदेश भी हैं जिन में देशी रजवाड़े राज्य करते हैं। अंगरेज़ी सरकार ही इस इतने बड़े भूखंड पर शान्ति रखती है।

इस बड़े कार्य्य को अंगरेज़ी सरकार ऐसी शक्ति के साथ करती है जो अनिवार्य्य है। यह ऐसी शक्ति है जो विरोध करने वालों का बात की बात में ध्वंस कर सकती है।

अंगरेज़ी सरकार की यह शक्ति इस कारण और भी अनिवार्य्य है कि उस में बाहुबल, बुद्धिबल और नीतिबल तीनों का संयोग है। इसी सुख संयोग के कारण अंगरेज़ी राज्य अपने से पहले के राज्यों की अपेक्षा अधिक शक्तिसम्पन्न और स्थिर है।

इस से सिद्ध है कि प्रत्येक देशी रजवाड़े को उस अंगरेज़ी सरकार से मिलकर चलना चाहिए जिसकी इतनी अनिवार्य्य शक्ति है। जो देशी राजा उसे कुपित करे उसकी बड़ी भारी मूर्खता है। अंगरेज़ी सरकार को प्रसन्न रखना राजा महाराजों के लिए अत्यन्त ही आवश्यक है। इस आवश्यकता को वे जहां तक समझें वहां तक उनके लिए अच्छा ही है।

आनन्द की बात यह है कि अंगरेज़ी सरकार के गुण और व्यवहार ऐसे हैं कि उसे प्रसन्न रखने में कोई बड़ा खर्च वा कठिनता नहीं है। जिस प्रकार अंगरेज़ सरकार का बाहु-बल अदमनीय है उसी प्रकार बुद्धि, नीति और न्याय का बल भी अदमनीय है। वह अनीति, अन्याय और नासमझी की बातों से सदा बचती है। यदि उसे यह अच्छी तरह दिखला दिया जाय कि यह काम अनीति और अन्याय का है तो वह उससे किनारे हो जायगी। यह अंगरेज़ी सरकार में बड़ा भारी गुण है। इसी गुण को देख देशी रियासतों को भरोसा है कि वे सुख और मान मर्य्यादा के साथ बराबर बनी रहेंगी।

इन सब बातों को विचार कर देशी रजवाड़ों को चलना चाहिए। उन्हें उन लोगों से कुछ भी सम्बन्ध न रखना चाहिए जो अंगरेज़ सरकार के विरुद्ध हों। उन्हें किसी ऐसे राजनैतिक आन्दोलनों में सहायता न देनी चाहिए जो अंगरेज़ी सरकार के सरासर विरुद्ध हों।

आज कल देशी रजवाड़ों के लिए अंगरेज़ी सरकार को प्रसन्न रखने की सब से अच्छी युक्ति यही है कि वे अपने राज्य का शासन अच्छा करें और इसका ध्यान रक्खें कि उनका प्रबन्ध ऐसा न हो जिससे अंगरेज़ी सरकार के प्रबन्ध में किसी प्रकार की बाधा न पड़े।

यदि अंगरेज़ी सरकार से किसी बात में मत भेद हो तो राजों को अपने पक्ष की युक्तियों को उसके सामने उपस्थित

करना चाहिए। अपने स्वत्व, मान और अधिकार की रक्षा के लिए उन्हें अंगरेज़ी सरकार के न्याय और नीति की दुहाई देनी चाहिए। अतः राजा महाराजों तथा उनके दीवानों को उसके न्याय और नीति के मुख्य मुख्य सिद्धान्तों को जान लेना चाहिए। इनमें से कुछ थोड़े से यहां बतलाए जाते हैं।

पहले हम महारानी विक्टोरिया के १८५८ वाले घोषणा-पत्र को लेते हैं। उसका एक पैरा इस प्रकार है—"हम अपने वर्तमान् राज्य को और बढ़ाना नहीं चाहतीं और जिस प्रकार हम अपना राज्य किसी को दबाने और अपना हक किसी को मारने न देंगी उसी प्रकार दूसरों के राज्यों पर किसी प्रकार के अतिक्रमण की अनुमति न देंगी।"

ऊपर के वाक्यों से एक बड़ा सिद्धान्त तो यह निकलता है कि अंगरेज़ सरकार ने दृढ़ प्रतिज्ञा की है कि हम किसी देशी रियासत की कोई ज़मीन न लेंगे। किसी कारण वा किसी बहाने से अंगरेज़ी सरकार किसी देशी रियासत की कोई ज़मीन न लेगी। इस प्रकार देशी राज्यों का एक बड़ा भारी खटका तो छूट गया। उन्हें इस बात का निश्चय दिलाया गया है कि उनका राज्य बराबर बना रहेगा। इस निश्चय प्रदान के लिए देशी रजवाड़ों को अंगरेज़ी सरकार का अनुगृहीत होना चाहिए।

पर इस निश्चय दिलाने का यह मतलब नहीं कि अंगरेज़ी सरकार किसी राजा को कभी गद्दी से उतारे ही गी

नहीं, यदि कोई राजा घोर कुप्रबन्ध का अपराधी होगा तो अंगरेज़ी सरकार उसे गद्दी से उतार देगी। इसी प्रकार यदि कोई राजा अंगरेज़ी सरकार से विद्रोह वा शत्रुता करेगा अथवा उसके शत्रुओं से मिलेगा तो भी वह उतार दिया जायगा। पर ऐसी दशा में भी अंगरेज़ी सरकार उस गद्दी पर से उतारे हुए राजा का राज्य अपने राज्य में मिला न लेगी, राजा चाहे उतार दिया जाय पर वह राज्य बना रहेगा। उस राज्य की गद्दी पर कोई दूसरा पुरुष, अर्थात् उतारे हुए राजा का कोई उत्तराधिकारी वा सम्बन्धी, बिठा दिया जायगा।

महारानी के घोषणापत्र का यह पैरा भी ध्यान देने योग्य है-"हम देशी रजवाड़ों के स्वत्व और मान-मर्य्यादा का वैसा ही ध्यान रक्खेंगी जैसा अपने स्वत्व और मान मर्य्यादा का। और हमारी इच्छा है कि वे तथा हमारी प्रजा उस सुख समृद्धि का भोग करें जो भीतरी शान्ति और सुराज्य से प्राप्त होती है।"

इस सम्बन्ध में एक बात का ध्यान रखना चाहिए देशी रजवाड़े कोई ऐसा अधिकार वा ऐसी प्रतिष्ठा न चाहें जो अति वा विलक्षण हो वा जो सभ्यसमाज वा सभ्य राज्य के प्रतिकूल हो, जैसे किसी राजा का यह अधिकार चाहना ठीक नहीं है कि वह जिस स्त्री को चाहे ज़बरदस्ती अपने महल में रख ले, जिसे चाहे उसे अकारण क़ैद कर दे। किसी राजा का यह अधिकार मांगना ठीक नहीं है कि वह जहां कहीं जाय उसके सामने कोई चारपाई पर बैठा न रहने पावे, कोई

छाता लगा कर न चलने पावे। इसी प्रकार कोई राजा यह अधिकार नहीं मांग सकता कि हम ऊपर गद्दी पर बैठा करें और सरकारी रेज़िडेंट बिना कुरसी के नीचे फ़र्श पर बैठा करे। किसी देशी रियासत के साथ जो सन्धियां हुई हैं उनके विरुद्ध कोई अधिकार मांगना भी ठीक नहीं है।

महारानी के इन शब्दों से कि "हम देशी रजवाड़ों के स्वत्व और मान का वैसा ही ध्यान रक्खेंगी जैसा अपने स्वत्व और मान का" यह न समझना चाहिए कि महारानी ने देशी रजवाड़ों को अपनी बराबरी का बनाया है। यह बराबरी कभी हो नहीं सकती। अंगरेज़ी सरकार संसार की एक बड़ी भारी शक्ति है। महारानी का अभिप्राय केवल यही है कि वे देशी रजवाड़ों का जो जैसा अधिकार वा जो जैसी प्रतिष्ठा है उसका वैसा ही ध्यान रक्खेंगी जैसा अपने अधिकार और प्रतिष्ठा का।

महारानी ने अपने घोषणापत्र में यह भी कहा है कि देशी रजवाड़ों के साथ जो जो सन्धियां हुई हैं उनका यथोचित पालन किया जायगा, और यह आशा प्रकट की है कि देशी रजवाड़े भी उनका यथोचित पालन करेंगे।

महारानी ने अपना घोषणापत्र समाप्त करते हुए जो संकल्प प्रकट किया है वह प्रत्येक छोटे बड़े शासक के ध्यान देने योग्य है। महारानी ने कहा है—"यह हमारी प्रबल इच्छा है कि भारतवर्ष के उद्योग व्यवसाय की वृद्धि करें, सर्वसाधारण के लाभ और उन्नति के काम बढ़ावें और अपनी सारी प्रजाओं

की भलाई के लिए राज्य करें। उनकी बढ़ती से हमारा बल है, उनके संतोष से हमारी रक्षा है, और उनका धन्यवाद ही हमारा सबसे बड़ा इनाम है।" इसी प्रकार प्रत्येक राजा को अपनी सारी प्रजा के लाभ के लिए राज्य करना चाहिए न कि केवल अपने और अपने थोड़े से मित्रों और आश्रितों के भोग विलास और सुख के लिए।

अंगरेज़ी सरकार यह अपना कर्त्तव्य समझती है कि वह एक रियासत को दूसरी रियासत की ज़मीन दबाने या उस पर ज़ोर ज़ुल्म न करने दे। इसी कर्त्तव्य के विचार से अंगरेज़ी सरकार यह भी देखती है कि कोई रियासत ऐसा काम न करे जिससे दूसरी रियासत उसकी ज़मीन दबाने या उस पर ज़ोर ज़ुल्म करने के लिए तैयार हो। यही कारण है कि जिस से अंगरेज़ी सरकार प्रत्येक रियासत से कहती है कि किसी दूसरी रियासत के साथ सीधे पत्र व्यवहार न करो। दो रियासतों के बीच जो लिखा पढ़ी हो। वह अंगरेज़ी सरकार के अफ़सरों द्वारा हो।

अंगरेज़ी सरकार प्रत्येक देशी रियासत से कहती है कि यदि तुम्हारे और किसी दूसरी रियासत के बीच कोई झगड़ा हो तो उसे हम से कहो। इसका भार अंगरेज़ी सरकार के ऊपर है कि वह ऐसे झगड़ों का ठीक ठीक निपटेरा करे।

अंगरेज़ी सरकार ने देशी रियासतों को रूस, फ़्रांस, जर्मनी, अमेरिका आदि दूसरी शक्तियों के ज़ोर ज़ुल्म से बचाने का भार भी अपने ऊपर लिया है। इसी लिए वह इस बात

को भी देखती रहती है कि कहीं कोई देशी रियासत इन शक्तियों में से किसी को चिढ़ा न दे जिससे वह ज़ोर जुल्म करने पर उतारू हों। इसी लिए वह कहती है कि देशी रियासतें दूसरी शक्तियों के साथ पत्र-व्यवहार न रक्खें। इसी लिए यदि किसी दूसरी शक्ति को किसी देशी रियासत से किसी प्रकार की हानि पहुँच जाय तो अंगरेज़ी सरकार तुरन्त उस देशी रियासत से उस हानि को भरवा देगी। जैसे यदि कोई देशी रियासत किसी दूसरी शक्ति की प्रजा को भूठ मूठ क़ैद करेगी, उसका धन सम्पत्ति छीनेगी तो वह शक्ति उस रियासत से हरजाना मांग सकती है।

अंगरेज़ी सरकार ने देशी रियासतों को उनकी प्रजा के ज़ोर जुल्म से बचाने का भार भी अपने ऊपर लिया है। इसी से वह यह भी देखती रहती है कि कोई रियासत कुनीति करके अपनी प्रजा को बिगड़ने न दे।

अंगरेज़ी सरकार के एक उच्च अधिकारी ने इस विषय पर साफ़ कहा है "देशी रजवाड़ों को भीतरी उपद्रव वा बलवे से बचाने का यदि भार लिया गया है तो साथ ही उन कार्रवाइयों में हस्तक्षेप करने का अधिकार भी हाथ में रक्खा गया है जिनसे उपद्रव वा बलवा खड़ा होता है। इस हस्तक्षेप की आवश्यकता इस कारण और अधिक पड़ता है कि प्रायः सब रियासतों में एक व्यक्तिगत शासन है जिससे शासन का भला वा बुरा होना राजा ही के गुण और आचरण पर रहता है।"

लार्ड नार्थब्रुक ने बड़ौदे के महाराज मल्हर राव गायकवाड़ के पास २५ जूलाई १८७४ को जो ख़रीता भेजा था उस में उन्होंने साफ़ लिखा था—"मेरे मित्र ! मैं अंगरेज़ी फ़ौज किसी बुराई करते हुए आदमी को बचाने के लिए नहीं भेज सकता। किसी राज्य की कुनीति को यदि ब्रिटिश शक्ति सहारा देगी तो वह भी उस कुनीति के दोष की भागी होगी। इस लिए अंगरेज़ी सरकार यह देखना अपना अधिकार क्या कर्त्तव्य समझती है कि किसी राज्य का बिगड़ा हुआ प्रबन्ध सुधर जाय और उसकी बुराइयां दूर हो जांय। यदि ये बातें न पूरी होंगी, यदि घोर कुव्यवस्था बनी रहेगी, यदि बड़ौदे की प्रजा के साथ उचित न्याय न होगा, यदि धन और प्राण की रक्षा न होगी, यदि प्रजा और देश के हित पर इसी तरह बराबर ध्यान न दिया जायगा तो अंगरेज़ी सरकार अवश्य बीच में पड़ेगी और इन बुराइयों को दूर करने और सुराज्य स्थापित करने के जो उपाय उसे उचित समझ पड़ेंगे वह करेगी। राज्य का नाश करने वाली इन बुराइयों को दूर करने के लिए यदि अंगरेज़ी सरकार बीच में पड़ी तो यह समझना चाहिए कि उसने गायकवाड के साथ भी मित्रता का काम किया और उनकी प्रजा के प्रति भी अपने कर्त्तव्य का पालन किया।"

यह अच्छी तरह समझ रखना चाहिए जब तक कोई कारण न मिलेगा अंगरेज़ी सरकार देशी रियासतों के प्रबन्ध में कभी दख़ल न देगी।

यदि किसी दूसरे राजा से मिलना हो तो बड़ी शिष्टता और सभ्यता के साथ मिलना चाहिए जिसमें उसे अंगरेज़ी सरकार से इस विषय में किसी प्रकार की शिकायत करने का अवसर न मिले।

यदि किसी दूसरी रियासत का कोई असामी वा अपराधी रियासत में आ जाय तो अपने यहां की पुलिस द्वारा उसे पकड़ाने का पूरा बन्दोबस्त करना चाहिए।

फ़ौजदारी और दीवानी के मामलों में तथा बनिज व्यापार के सम्बन्ध में दूसरी रियासत की प्रजा के साथ वैसा ही व्यवहार करना चाहिए जैसा अपनी प्रजा के साथ। उनमें कोई भेद भाव न रखना चाहिए।

जहां तक हो सके सरहदी झगड़े न उठने पावें। और यदि कभी इस तरह का कोई झगड़ा उठ भी खड़ा हो तो शान्ति भंग कभी न होने दे। झगड़े की जांच और निपटेरे के लिए अंगरेज़ी सरकार को लिखे।

जहां लट्ठ गाड़कर सरहद बांधी गई है वहां उन लट्ठों की पूरी रक्षा करनी चाहिए।

यदि किसी दूसरे राजा की कुछ निज की ज़मीन रियासत में हो तो असामियों से लगान इत्यादि वसूल करने में उसे पूरी सहायता पहुंचानी चाहिए।

ऐसी सड़कों वा पुल आदि के बनवाने में जिनसे दोनों रियासतों को लाभ है पूरा योग देना चाहिए।

दूसरे राजाओं के स्वत्व और मान मर्य्यादा का वैसा ही ध्यान रखना चाहिए जैसा अपने स्वत्व और मान मर्य्यादा का।

इंगलैंड, फ्रांस, जरमनी, रूस, अमेरिका आदि बहुत से साम्राज्यों के लोग घूमते घामते देशी रियासतों में आ जाते हैं जिनमें से अधिकांश यूरोपियन होते हैं। यह समझ रखना चाहिए कि यूरोपियन कैसा ही हो जहां कहीं रहेगा उसकी गवर्नमेण्ट उसकी रक्षा करेगी। वह उस पर किसी प्रकार का अन्याय वा अत्याचार न होने देगी। इससे देशी रियासतों को अपने राज्य में आए यूरोपियनों का बड़ा ध्यान रखना चाहिए। जहां तक हो सके राजा महाराजों को यूरोपियनों के साथ ज्यादा रगड़ा न करना चाहिए। यदि कोई यूरोपियन राजा महाराजों से मिलना चाहे तो उन्हें उससे तभी मिलना चाहिए जब वह कोई ठीक परिचय-पत्र उपस्थित करे, अन्यथा उसे रेजिडेंट के पास भेज देना चाहिए। यदि कोई यूरोपियन परिचय पत्र के साथ आवे तो उसका पूरा सम्मान करना चाहिए।

देशियों की प्रकृति और रीति भांति न जानने के कारण प्रायः यूरोपियन लोग देशी रियासतों में आकर भूल चूक करते हैं। इसके लिए उनसे बुरा न मानना चाहिए। जैसे कभी कोई यूरोपियन किसी मंदिर में घुस जाय, किसी पवित्र स्थान पर शिकार करे वा मछली मारे तो उसे दंड देने का प्रयत्न न करना चाहिए, धीरे से समझा देना चाहिए। यदि समझाने से न माने तो रेजिडेंट को सूचना देनी चाहिए।

इस बात का बंदोबस्त रहे कि कोई यूरोपियन देशी रियासत में लूटा न जाय। यदि किसी यूरोपियन के साथ कोई बुराई की गई हो तो अपराधियों को उचित दंड देना चाहिए। इस में ढिलाई करने से रियासत की बदनामी हो जायगी।

यदि कोई यूरोपियन अफ़सर रियासत में कोई छोटा मोटा अपराध करे, किसी को मारे पीटे, रियासत के अधिकारियों का अपमान करे तो मामले की ठीक ठीक इतला रेज़िडेंट को देनी चाहिए, वह उचित कार्रवाई करेगा। या तो वह अफसर बदल दिया जायगा, या मुअत्तल कर दिया जायगा अथवा और कोई दंड पावेगा।

संभव है कि कभी अंगरेज़ी सरकार से शत्रुता रखने वाले यूरोपियन देशों के भेजे हुए गुप्तचर अंगरेज़ी सरकार के प्रति विद्वेष फैलाने के लिए रियासत में आ जायं। ऐसे गुप्तचरों से बहुत चौकस रहना होगा। उनके विषय में जो जो बातें मालूम हों सबकी खबर सरकारी रेज़िडेंट को पहुंचानी होगी।

देशी रियासतों को चाहिए कि वे प्रजा के धर्म वा मत में किसी प्रकार का हस्तक्षेप न करें क्योंकि धर्मभाव बहुत प्रबल होता है।

किसी बहुत दिनों से चली आती हुई रीति को एकबारगी न बदल देना चाहिए। जिस अधिकार को बहुत से लोग बहुत दिनों से भोगते आ रहे हों उससे उन्हें एकबारगी न वञ्चित कर देना चाहिए।

सारांश यह कि कोई ऐसा काम न करना चाहिए जिससे बहुत से लोगों में घोर असन्तोष फैले।

अंगरेज़ी सरकार के शत्रु और मित्र देशी रियासतों के भी शत्रु और मित्र हैं। यदि अंगरेज़ी सरकार से किसी दूसरी शक्ति से लड़ाई हो रही है तो कोई देशी रियासत उस शक्ति के साथ मित्रता का व्यवहार नहीं रख सकती। इसी प्रकार यदि कोई आदमी अंगरेज़ी सरकार के विरुद्ध कार्रवाई करता हो, उसके विरुद्ध किसी राजनैतिक आन्दोलन में सम्मिलित होता हो तो देशी रियासतों को ऐसे आदमी को किसी प्रकार का आश्रय न देना चाहिए।

इसी प्रकार यदि कोई आदमी किसी देशी रियासत के विरुद्ध कोई कार्रवाई करता होगा, वहां उपद्रव खड़ा करना चाहता होगा तो अंगरेज़ी सरकार ऐसे आदमी को किसी प्रकार का आश्रय न देगी, जहां तक होगा उसे दबावेगी।

अंगरेज़ी सरकार के साथ जो सन्धियां हुई हैं उनके अनुसार अब वे लड़ाइयां सब दिन के लिए दूर हो गई जो देशी रियासतों के बीच हुआ करती थीं और जिनसे सारा देश दुखी था।

सन्धि के अनुसार प्रत्येक देशी रियासत को चाहिए कि अंगरेज़ी सरकार जो कुछ उसके भले के लिए सलाह दे उसे मान लें।

यहां पर यह समझ लेना भी आवश्यक है कि कौन सलाह अंगरेज़ी सरकार की समझनी चाहिए और कौन सलाह

उसके मातहत अधिकारियों की। सन्धि के अनुसार जो सलाह वाइसराय वा बड़े लाट देंगे वही अंगरेजी सरकार की सलाह समझी जायगी और उसी को मानने को देशी रियासतें बद्ध हैं।

मेरे कहने का यह अभिप्राय नहीं कि कमिश्नर, कलक्टर आदि मातहद अंगरेज़ अधिकारियों की राय मानी ही न जाय। ऐसी राय कभी कभी बड़े काम की होती है। कहने का प्रयोजन यह है कि उनकी राय न मानने से देशी रियासतों पर सन्धि भंग का दोष नहीं लग सकता। बात भी ठीक है। यदि देशी रजवाड़ों के लिए प्रत्येक श्रेणी के अफ़सरों की राय का मानना आवश्यक हो तब तो वे कुछ करही न सकेंगे।

भारतक सरकार जो सलाह देगी वह या तो पत्र द्वारा सीधे महाराज के पास भेजेगी अथवा रेजिडेंट के मारफ़त। यदि रेजिडेंट के मारफ़त भारत सरकार सलाह देगी तो रेजिडेंट कह देगा कि मैं यह सलाह भारत सरकार के आज्ञा-नुसार देता हूं। यदि भारत सरकार को अपनी सलाह पर ज़ोर देना होगा तो वह कभी कभी, इस बात का आभास भी दे देगी कि यह सलाह सन्धिपत्र के अनुसार दी जा रही है।

यह तो प्रत्यक्ष है कि सन्धि के अनुसार भारत सरकार जो सलाह देगी वह रियासत के भले के लिए होगी। अतः कोई ऐसी सलाह न दी जायगी जिससे रियासत की कुछ हानि हो या जो रियासत की मान मर्य्यादा के विरुद्ध हो। जैसे किसी राजा या महाराजा को यह सलाह न दी जायगी

कि वे अपनी कुछ ज़मीन छोड़ दें या दीवानी वा फौजदारी का इख़्तियार अपने हाथ में न रक्खें, इत्यादि ।

यह हो सकता है कि भारत सरकार जिस सलाह से राज्य की भलाई समझती हो उससे महाराज कुछ भलाई न समझते हों । ऐसी दशा में महाराज को अपनी राय सरकार को अच्छी तरह समझानी चाहिए । अंगरेज़ी सरकार में यही तो बड़ा भारी गुण है कि यदि उसे कोई बात युक्ति के साथ समझा दी जाय तो वह उसे मान लेती है ।

तर्क वितर्क के उपरान्त जो सम्मति सरकार स्थिर करे उसे सन्धि के अनुसार मान लेना चाहिए । हां यदि कभी कोई ऐसा ही भारी मामला आ पड़े तो वह भारत सेक्रेटरी के पास भी विचार के लिए भेजा जा सकता है ।

यह बात भी अच्छी तरह समझ रखनी चाहिए कि अंगरेज़ी सरकार जब आवश्यकता देखेगी तभी इस प्रकार की सलाह देगी । यह आवश्यकता उस समय होगी जब कोई रियासत जान बूझ कर वा अनजान में ऐसी बात की ओर ध्यान न देगी जिससे उसका भलाई है । पर जब कोई रियासत अपना काम बुद्धि और विवेक के साथ कर रही है तब उसके साथ किसी प्रकार की छेड़छाड़ न की जायगी । भारत सरकार बराबर यही चाहती है कि देशी रियासतें जो उन्नति करें आप से आप करें बाहरी दबाव के कारण नहीं, पर यदि कोई रियासत सरासर भूल करेगी तो अंगरेज़ी सरकार का यह कर्त्तव्य होगा कि वह सन्धि के अनुसार दख़ल दे ।

अंगरेज़ी सरकार देशी राज्यों के लिए इतने उच्च शासन का आदर्श न रक्खेगी जिसका वे निर्वाह न कर सकें। इसी प्रकार यह इस बात का भी दबाव न डालेगी कि देशी राज्य एक दम से अंगरेज़ी राज्य प्रणाली की नक़ल करें। अंगरेज़ी नमूने पर कहां तक चलना उचित होगा यह प्रत्येक रियासत आप देख लेगी।

अंगरेज़ी सरकार इस प्रकार की सलाह जब कोई भारी मामला होगा तभी देगी थोड़ी थोड़ी बातों में नहीं, जिससे रियासत के हाथ पांव बंध जांय। सन्धि के अनुसार अंगरेज़ी सरकार जो सलाह देगी वह प्रसंग के अनुसार जहां तक होगा बड़े सुहृद और कोमल भाव से देगी। भर सक इस बात का ध्यान रक्खा जायगा कि ऐसी सलाह कठोर शब्दों में न हो और उससे देशी राजा के अधिकार में बट्टा न लगे।

अंगरेज़ी सरकार की प्रवृत्ति के विषय में एक बड़ा भारी सिद्धान्त जान रखना चाहिए। जहां (देशी) राजा और उसकी प्रजा दोनों को साथ ही सन्तुष्ट करना सम्भव होगा वहां तो अंगरेज़ी सरकार दोनों के लाभ का ध्यान रक्खेगी पर जहां दोनों के लाभों में परस्पर विरोध होगा वहां अंगरेज़ी सरकार प्रजा ही का लाभ देखेगी।

आदर सम्मान—सरकारी रेज़िडेंटों और राजा महाराजों के बीच पूरा मेल रहना चाहिए। इसके लिए दोनों ओर से प्रयत्न होना चाहिए। राजा महाराजों को रीति के अनुसार रेज़िडेंट का उचित सम्मान करना चाहिए। इस विषय में जो

दस्तूर चला आता हो उसका बराबर ध्यान रखना चाहिए। जैसे, रेज़िडेंट यदि मिलने आवें तो उन्हें कहां जाकर लेना चाहिए, किस प्रकार बैठाना चाहिए, इन सब बातों का पूरा विचार रक्खा जाय। सारांश यह कि रेज़िडेंट को हर तरह से निश्चय रहे कि महाराज उनके उचित सम्मान का बराबर ध्यान रखते हैं। रेज़िडेंट के मन में यह विचार कभी न हो कि यदि अवसर पावेंगे तो महाराज उनके सम्मान में कुछ कसर करेंगे। एक उदाहरण से अभिप्राय स्पष्ट हो जायगा। मान लीजिए कि यह दस्तूर चला आता है कि किसी विशेष अवसर पर रेज़िडेंट महाराज के दाहने बैठें। यदि भूल से या यों ही रेज़िडेंट साहब महाराज के बायं बैठ गए तो महाराज को यह न चाहिए कि वे चुपचाप रह जांय बल्कि उन्हें तुरन्त रेज़िडेंट साहब को अपने दाहने बैठाना चाहिए।

यदि इतना ध्यान रखने पर भी कभी कोई भूल हो जाय तो महाराज को तुरन्त उसके लिए खेद प्रकट करना चाहिए।

रेज़िडेंट को भी महाराज को राज्य का शासक समझ उनके उचित सम्मान का बराबर ध्यान रखना होगा। सारांश यह कि दोनों को एक दूसरे के साथ उचित व्यवहार रखना पड़ेगा। इस विषय में उनके बीच किसी प्रकार की ईर्षा या आशंका न होनी चाहिए।

डाली इत्यादि भेजने का जो दस्तूर है उसके सिवा रेज़िडेंट को और किसी तरह की भारी नज़र देने की कोशिश न करनी

चाहिए। अंगरेज़ी अफ़सरों को बहुमूल्य भेंट स्वीकार करने का निषेध है, और प्रायः उनमें इतना विवेक होता है कि वे छिपा कर भी इस निषेध का उल्लङ्घन नहीं करना चाहते। सारांश यह कि किसी अंगरेज़ी अफ़सर पर गुप्त या अनुचित रीति से निहोरा डालने का यत्न न करना चाहिए।

रेज़िडेंट को जो बातें बतलाई वा लिखी जांय वे बिलकुल जंची हुई और सच्ची हों। इसमें कसर होने से विश्वास की हानि होती है।

रेज़िडेंट को जो बात बतलाई वा लिखी जाय वह पूर्ण शिष्टता और शान्ति के साथ। जहां मतभेद प्रकट करना हो वहां इसका और भी अधिक ध्यान रक्खा जाय।

कभी कभी कुछ बातों में मतभेद भी होगा। बहुत सी बातें तो जांच, पूछपाछ और सोच विचार करने से तै हो जांयगी। कुछ बातों में मिलकर निपटेरे की राह निकालनी होगी। बाकी और छोटे छोटे मामलों में एक को दूसरे की बात मानने ही से बनेगा।

पर कुछ मामले ऐसे भी आन पड़ेंगे जिनमें भारी भारी बातों का वारा न्यारा होगा और जिनमें मतभेद भी अधिक होगा। ऐसे मामलों में गहरी लिखा पढ़ी की ज़रूरत होगी। ऐसे मामलों में महाराज की ओर उनका मत प्रकट करने के लिए जो पत्र भेजे जायं वे बड़ी सावधानी से लिखे जांय जिसमें जब वे अंगरेज़ सरकार के ऊंचे अधिकारियों के हाथ में जांय

तब उनका अभिलषित प्रभाव पड़े। ऐसे पत्र पूर्ण और अभिप्राय-गर्भित हों, उनकी भाषा और ध्वनि शिष्ट और नम्र हो, उनमें लिखी बातें और दलीलें ठीक और स्पष्ट हों, और उनमें जिन सिद्धान्तों की आड़ ली गई हो वे ऐसे हों जिन्हें अंगरेज़ी सरकार स्वीकार करती हो।

यहां पर यह भी बतला देना आवश्यक है कि ऐसी लिखा पढ़ी के लिए वकील बैरिस्टर उपयुक्त नहीं होते जब तक उन्हें राजनैतिक पत्र व्यवहार का भी अभ्यास न हो। जिस ढंग से एक वकील जज को सम्बोधन करता है वह उस से कहीं भिन्न है जिस ढंग से राजा महाराजा अंगरेज़ सरकार को सम्बोधन करते हैं। क़ानूनी दलीलें काम में लाई जांय पर ऐसी लिखा पढ़ी शासन-विभाग के अनुभवी अधिकारियों ही के द्वारा होनी चाहिए।

जिन मामलों में मतभेद होगा उन्हें सेक्रेटरी आफ़ स्टेट आदि अंगरेज़ी राज्य के प्रधान अधिकारियों के पास भेजने में कभी कभी मनमोटाव हो जाना भी सम्भव है, पर इस इतने के लिए राजा महाराजों को अपना पक्ष न छोड़ना चाहिए। अपने अधिकार और मान मर्य्यादा तथा प्रजा के हित की रक्षा के लिए उन्हें ऐसे मामलों को प्रधान अधिकारियों तक ले जाना चाहिए। इसके लिए अंगरेज़ी सरकार उन्हें किसी प्रकार का दोष न देगी क्योंकि वह भी उनके मान और अधिकार को उसी तरह रक्षित रखना चाहती है जिस तरह अपने मान और अधिकार को।

यदि रेज़िडेंट की न्याय-बुद्धि में आवेगा तो जिन बातों के लिए महाराज प्रधान अधिकारियों के पास लिखेंगे उनका वह भी अपने पक्ष में अनुमोदन कर देगा। क्यों कि सच पूछिए तो रेज़िडेंट दोनों ओर का प्रतिनिधि है। अंगरेज़ी सरकार का नफ़ा नुक़सान देखनेवाला भी वही है और देशी रियासत का भी। यदि देशी रियासत की ओर से कोई और प्रतिनिधि अंगरेज़ी सरकार के यहां होता तो बात दूसरी थी। पर रेज़िडेंट ही सरकार का नफ़ा नुक़सान महाराज को बत-लाता है और महाराज का नफ़ा नुक़सान सरकार को। इस कारण उसे दोनों पल्ले बराबर रखने चाहिएं और निष्पक्ष रहना चाहिए। काम पड़ने पर उसे देशी रियासत के हित की भर सक रक्षा करनी चाहिए। हर्ष की बात है कि बहुत से रेज़िडेंट ऐसे उच्चाशय देखे गए हैं कि उन्हों ने अधिकारियों का थोड़ा बहुत कोप सह कर भी देशी रियासतों के हित की पूरी पूरी रक्षा की है।

बात यह है कि देशी रियासत को रेज़िडेंट ही से काम पड़ता है। जैसा रेज़िडेंट होगा अंगरेज़ी सरकार भी उन्हें वैसी ही समझ पड़ेगी। बादशाह का सारी घोषणाएं और बड़े लाट के सारे उदार सङ्कल्प उन्हें वहीं तक ठीक जान पड़ेंगे जहां तक रेज़िडेंट उन्हें अमल में लावेगा। अत: रेज़िडेंट को वह नि:स्वार्थता, वह उदारता और वह न्यायप्रियता पूरी पूरी दिखानी चाहिए जिसके लिए अंगरेज़ी सरकार प्रसिद्ध है। जैसा स्वामी हो वैसा उसका प्रतिनिधि होना चाहिए।

सब भारी मामलों में महाराज के सामने उनकी कौंसिल या सभा की पक्की सम्मति उपस्थित की जाय। यदि इस पर भी कोई भारी संदेह की बात बनी रहे तो रेज़िडेंट से सलाह लेनी चाहिए। वह निःस्वार्थ सम्मति देगा। यदि कोई भारी मामला हो तो उसके विषय में कोई संदेह न रहने पर भी रेज़िडेंट से राय ले लेना अच्छा ही होगा। पर ज़रा ज़रा सी बातों के लिए रेज़िडेंट को तंग करना भी विचार और शासन शक्ति की न्यूनता प्रकट करेगा।

रेज़िडेंट और महाराज के बीच कोई भारी बात झटपट ज़बानी न तै हो जानी चाहिए। दीवान को इतना समय मिलना चाहिए कि वह आगा पीछा विचारे, कुछ बातें बतलावे तथा कुछ अपनी सम्मति प्रकाशित करे।

यदि कोई बात ज़बानी तै भी हुई हो तो वह झटपट लिख ली जाय नहीं तो पीछे से बड़ी गड़बड़ी, भ्रान्ति और विरक्ति होगी। नियम तो यह होना चाहिए कि जब तक कोई बात काग़ज़ पर लिख न ली जाय तब तक वह तै न समझी जाय।

जब राजा महाराजा अपनी रियासत के कर्म्मचारी विवेक और सावधानी के साथ चुनेंगे तब रेज़िडेंट को उनकी मुक़र्ररी, तरक्की आदि के बारे में किसी तरह दख़ल देने की ज़रूरत न होगी।

रेज़िडेंट के पत्रों के जवाब जल्दी भेजे जाय। पर जो पत्र भारी मामलों के सम्बन्ध में हों उनका उत्तर सोच विचार कर दिया जाय।

इस नियम का ध्यान रखना चाहिए कि महाराज की ओर से अंगरेज सरकार के प्रधान अधिकारियों के पास जो पत्र भेजे जायं वे रेज़िडेंट की मारफ़त, बाला बाला नहीं।

राजा महाराजों को गुप्त कार्रवाइयों पर कभी विश्वास न करना चाहिए। कोई आकर महाराज से धीरे से कहेगा "मेरा बड़े लाट साहब पर बहुत कुछ ज़ोर है मैं महाराज का काम करा सकता हूं"। कोई कोई तो यहां तक आकर कहेंगे कि उनका ज़ोर विलायत के अधिकारियों तक पर है। ऐसे लोग प्रायः ओछे होते हैं और झूठी बातें बना कर रुपया फंसना चाहते हैं। ऐसे लोगों को पास न फटकने देना चाहिए क्यों कि वे केवल रुपया ही नहीं लेंगे बल्कि महाराज की बदनामी करेंगे।

रियासतों में सरकारी रेज़िडेंट और उनके सहकारियों को कुछ अधिकार प्राप्त रहते हैं। राजा तथा उसके कर्मचारियों को उनके इन अधिकारों में हस्तक्षेप न करना चाहिए।

सारांश यह कि राजा महाराजों को चाहिए कि सरकारी रेज़िडेंट का उचित सम्मान करें, उससे मित्रता का व्यवहार रक्खें, और अपनी खरी और स्थिर नीति के द्वारा उसे अपना विश्वासी और सहायक बनावें।

अंतिम वक्तव्य—अब यह अच्छी तरह स्पष्ट हो गया होगा कि भारी शक्ति वा अधिकार के साथ भारी जवाबदेही भी है। आज कल महाराजा का पद न अखंड सुख और भोग विलास के लिए है, न इसी लिए है कि जन समूह का जितना

रुपया जिस तरह चाहे उस तरह उड़ाया जाय, न इस लिए है कि राज-शक्ति का प्रयोग बिना किसी प्रकार के अवरोध के किया जाय, और न इस लिए है कि जो महाराजा के मन में आवे वही क़ानून हो जाय। आज कल राजसिंहासन पर एक प्रचंड ज्योति जग रही है। यह ऐसी ज्योति है जो प्रत्येक दोष को जनसमूह के सामने झलकाती है। यह ऐसी ज्योति है जिसने राजाओं के ऊपर कर्तव्य का भार बढ़ा दिया है।

आज कल राजा महाराजा अपने कामों के लिए चारों ओर जवाबदेह हैं। वे परमात्मा और अपनी आत्मा के निकट जवाबदेह हैं। वे निर्धारित सिद्धान्तों के निकट जवाबदेह हैं, वे अपनी प्रजा के निकट जवाबदेह हैं। वे अंगरेज़ी सरकार के निकट जवाबदेह हैं। वे शिक्षित समाज के निकट जवाबदेह हैं।

राजा महाराजों को सदैव अपने कर्तव्य का उच्च आदर्श रखना होगा। इसके लिए यह आवश्यक होगा कि उनके प्यारे और ऐसे सलाहकार हों जिन के कर्तव्य के आदर्श उच्च हों।

तअल्लुकेदारों के लिए कुछ अलग बातें।

हिसाब किताब—आमद और ख़र्च। हिसाब सब एक बही पर दर्ज होना चाहिए। पर ख़र्चों का सब ब्योरा अलग अलग बहियों पर रहना चाहिए। जैसे इमारत का सब ख़र्च एक बही में रहे, अदालत का दूसरी बही में, भंडारख़ाने का तीसरी में, निज का ख़र्च चौथी में, इसी प्रकार और भी। हर एक विभाग के लिए जितना रुपया दरकार हो वह छपे हुए चेक द्वारा जिस पर मालिक का दस्तख़त हो राज्य के ख़ज़ाने से मंगा लिया जाय और जितना रुपया ख़ज़ाने से लिया जाय वह उस विभाग की बही पर चढ़ा लिया जाय। एक एक विभाग का हिसाब किताब एक एक मुहर्रिर के ज़िम्मे कर दिया जाय और वही उसका जवाबदेह रहे। अदालत के ख़र्च बर्च का हिसाब रखने के लिए अलग मुहर्रिर रखने की ज़रूरत नहीं है। जो रियासत का मुख़्तार-आम हो वही अदालत के ख़र्च का सारा हिसाब किताब अपने ज़िम्मे रक्खे और महीने महीने उसे जांच के लिए सदर कचहरी में भेजा करे। मुख़्तार आम हर महीने उन मुक़दमों के ख़र्च की सूची भेजे जिनकी डिगरी हो गई हो, जो ख़ारिज हो गए हों, और जो दायर हों।

इस ढंग पर चलने से सब हिसाबों का एक में गड्डबड्ड न रहेगा और मालिक एक एक मद के हिसाब की, जांच के लिए एक एक दिन मुकर्रर कर सकेगा।

फ़सल के समय अनाज भंडारख़ाने में बराबर जमा हुआ करे। जो जिंस भंडारख़ाने में न हो वह बनियों से मोल ली जाय। जितनी चीज़ें बनियों से ली जाय सब के लिए उन्हें छपे चेक दिए जायं जिसमें हिसाब के समय यह झगड़ा न रह जाय कि किसके यहां से कितनी चीज़ आई है। बनिए बहुत समझ बूझ कर लगाए जायं। उन्हें लगाने का काम मुंशी मुहर्रिरों पर न छोड़ दिया जाय क्योंकि वे अपने ही मेल जोल के आदमियों को लगावेंगे। रियासतों में एक बात बड़ी विलक्षण देखने में आती है। हिसाब किताब रखने के लिए मुहर्रिर तो बहुत से रक्खे जाते हैं पर उन की जांच करने वाला खुद मालिक ही रहता है। विचारने की बात है कि उसके लिए इतने हिसाबों को ठीक ठाक जांचना कितना कठिन है। इस लिए यह आवश्यक है कि हिसाब किताब जांचने के लिए कोई विश्वासपात्र आडिटर रक्खा जाय।

भारी भारी चीज़ों की ख़रीदारी के लिए बड़ी बड़ी दूकानों ही से व्यवहार रखना ठीक है। जो चीज़ें मगानी हों उनके लिए मालिक खुद अपने हाथ का पुरज़ा भेज दे जिस में बीच के लोगों को खाने की जगह न रहे। भारी भारी दूकानें दाम तो ज़रूर थोड़ा अधिक लेती हैं पर चीज़ें बढ़ियां देती हैं जिस

से ख़रीदार घाटे में नहीं रहता। चीज़ें मंगाने के लिए जो चिट वा आर्डर भेजे जायं उनकी नक़ल एक बही पर रहे।

प्रबंध-समिति—बड़े बड़े योग्य और विश्वासपात्र कर्म्मचारियों का भी बिना डर दाब के रहना ठीक नहीं और मालिक हर एक काम के ब्योरों की जांच आप नहीं कर सकता इस लिए यदि रियासत के कर्मचारियों और प्रतिष्ठित रईसों में से कुछ लोगों को चुन कर एक प्रबन्ध समिति वा कमेटी बना दी जाय तो मालिक सब हिसाब किताब और कागज पत्रों को देखने के झंझट से बच जायगा। रियासत के निवासी यदि अच्छी तरह शिक्षित न होंगे तो भी उस जगह की सब बातें उनकी जानी बूझी रहेंगी इससे वे बड़े काम के होंगे। मालिक को कमेटी के मेंबरों की राय जानने से बहुत लाभ होगा और वे निश्चय भी कर सकेंगे कि कौन राय ठीक है। ऐसी कमेटी बनाने में कुछ ख़र्च भी नहीं है क्योंकि रियासत के जो प्रतिष्ठित रईस हैं उन्हें कुछ न कुछ लाभ रियासत से पहुंचता ही है अतः उन्हें वेतन देने की आवश्यकता नहीं है।

गावों का ठीका—काश्तकारों से सीधे लगान वसूल करने की अपेक्षा गावों को ठीके पर देना अच्छा है। इस से जमा भी सहज में वसूल हो जाती है, हिसाब किताब जांचने का उतना बखेड़ा नहीं रहता और रियासत के नौकरों को रुपया कमाने का भी अवसर नहीं मिलता। कुछ लोग ठेकेदारों के जुल्म के कारण इस रीति को अच्छा नहीं समझते पर मेरी समझ में ज़मीदारों के सिपाही जितनी आफ़त मचाते हैं

उतनी ठेकेदार नहीं, यदि वे समझ बूझ कर चुने जायँ। यदि किसी गांव का ठेका देना है तो उस गांव में जो सब से सम्पन्न और भलामानुस काश्तकार हो उसी को ठेका दे दिया जाय, यदि आवश्यकता हो तो उस से कुछ ज़मानत भी ले ली जाय। जहां तक हो सके छोटी छोटी मियाद के ठेके न दिए जायँ। ठेकेदार रियासत के बाहर के आदमी न हों। अपने नौकरों और सम्बन्धियों को ठेका न देना चाहिए। जहां तक हो सके ठेके छोटी जाति के लोगों को जैसे, कुरमी, काछी, कोयरी आदि को दिए जायँ, ब्राह्मण, क्षत्रिय आदि ऊंची जाति के लोगों को नहीं। ठेकेदार से गांव के मुनाफ़े की पाई पाई न वसूल कर ली जाय कुछ गुंजाइश उसके लिए भी रक्खी जाय। यदि ठेके में कुछ लाभ रहेगा तो एक के छोड़ने पर उसके लिए कई आदमी दौड़ेंगे। इस प्रकार लगान वसूल करने के खर्च की बचत होगी, उपजाऊ ज़मीन भी अधिक निकलेगी हर तरह रियासत को लाभ ही होगा। किसी ठेके की मियाद जब पूरी हो जाए तब यदि कोई हर्ज न हो तो पहले ही ठेकेदार को फिर ठेका दिया जाय। थोड़े से और मुनाफ़े के लिए किसी नए आदमी को देना ठीक नहीं।

ठेका देते समय गांव का मुनाफ़ा देख लिया जाय फिर उसमें से ठेकेदार के लिए कुछ परता निकाल कर ठेका दे दिया जाय। जितने पट्टे और क़बूलियत हों सब स्टैंप पर हों, और फाइल की किताब में अक्षर क्रम से लगे रहें।

नौकरों को लगाना—आदमी कैसाही योग्य हो वह सब काम आप नहीं कर सकता। अच्छा काम कराने के लिए अच्छे नौकर चाहिए और अच्छे और विश्वासपात्र नौकर मिलना सहज बात नहीं है। अच्छे नौकर भी बिना डर दाब के अच्छा काम नहीं करेंगे। स्वामी की बुद्धिमानी इसी में है कि वह एक एक जगह के लिए उपयुक्त नौकर चुने क्योंकि यह सम्भव नहीं कि एक ही आदमी में सब आवश्यक गुण हों। कोई आदमी एक काम के लिए उपयुक्त है और दूसरे काम के लिए नहीं। समझदार मालिक अपने नौकर की क़दर एक गुण के लिए भी करेगा और उसके उसी गुण से लाभ उठावेगा। जिस तरह चतुर बढ़ई यह जानता है कि अपने किस किस औज़ार से कौन कौन काम लेना चाहिए उसी तरह चतुर स्वामी इस बात को जानता है कि अपने किस किस नौकर से कौन कौन काम लेना चाहिए। पर वह एकबारगी उन्हीं के विश्वास पर सब काम नहीं छोड़ देता। वह उनका नित्य का काम देख कर उन पर धीरे धीरे विश्वास करता है। जहां तक हो पुश्तैनी नौकर रखना अच्छा है चाहे वे योग्यता में औरों से कुछ घट कर भी हों, क्योंकि नए आदमियों की अपेक्षा पुश्तैनी नौकरे मालिक से अधिक प्रेम रखते हैं। जब कि कोई नौकर अपना काम अच्छी तरह कर रहा है तब उसके विरुद्ध छोटी छोटी शिकायतों को न सुनना चाहिए। छोटे बड़े हर एक राज्य में कुछ कुचक्री धूर्त रहते हैं जो सदा अपने लाभ के लिए इंतज़ाम में अदल बदल चाहते रहते हैं। ये कुटिल

नीतिवाले लोग इसी यत्न में रहते हैं कि मालिक सब काम अपने हाथ में ले ले क्यों कि वे जानते हैं कि ऐसा होने से खूब अंधाधुंध रहेगी और अपना अर्थ साधने का अच्छा मौका मिलेगा।

कुचक्री नौकर को निकाल देना चाहिए। क्योंकि यदि एक आदमी ऐसा रहेगा तो वह सब आदमियों को बिगाड़ देगा। यहां तक कि वह धीरे धीरे सब नौकरों का अगुआ और सलाहकार हो जायगा और सब नौकर उसके पास यह सीखने जाया करेंगे कि मालिक को कब और किस ढंग से धोखा देना चाहिए। वह अपने नए चेलों को सिखा देगा कि यदि कोई नौकर मालिक को लूटने का कोई ढंग रचता हो तो उसका भेद न खोलना।

पूरे ईमानदार और योग्य नौकरों का मिलना बहुत कठिन है क्योंकि सब मालिकों की अवस्था ऐसी नहीं होती कि वे नौकरों को भरपूर तनख्वाह दे सकें। यदि कोई नौकर अपने मालिक के लाभ का बराबर ध्यान रखता है और थोड़ा अपना भी लाभ करता है तो उसे छोड़ना न चाहिए। पूरे ईमानदार नौकरों को छोड़ दो प्रकार के और नौकर होते हैं। कुछ तो ऐसे होते हैं जो बराबर अपने मालिक का लाभ देखते हैं और दूसरों को उसे लूटने नहीं देते, चाहे आप थोड़ा बहुत लाभ उठा लें। पर कुछ ऐसे होते हैं जो मालिक को आप भी लूटते हैं और दूसरों को भी लूटने देते हैं। ऐसे लोगों पर उनके मातहत और साथी बड़े प्रसन्न रहते हैं।

कोई कभी उनकी शिकायत नहीं करता। कुछ नौकर ईमान-दार तो होते हैं पर चिकनी चुपड़ी बातों में आ जाते हैं। ऐसे लोग रिशवत लेने वालों से भी बुरे होते हैं। दो चार चिकनी चुपड़ी बातें ही जिनके लिए रिशवत है उन पर कहां तक विश्वास रक्खा जा सकता है।

यह भी आवश्यक है कि नौकर कई भिन्न भिन्न जातियों और धर्म्मों के रक्खे जायं जिसमें वे गुट्ट न बांधने पावें। सब बुराइयां खाली बैठने से होती हैं। इससे नौकरों को पूरा काम देना चाहिए जिसमें उन्हें तरह तरह की चालें सोचने का समय न मिले।

चालबाज़ नौकरों का यह भी एक ढंग है कि वे दिखाने के लिए आपस में झूठमूठ की लड़ाई किया करते हैं यद्यपि भीतर ही भीतर सब एक रहते हैं। सब विभागों के अलग अलग अफ़सर हों। मातहत नौकरों को जो शिकायतें करनी हों उन्हीं की मारफ़त करें। मालिक उन्हीं से सब बातें सुने। जहां ऐसी ही कोई बात आ जाय वहां मातहत नौकरों को सीधे अपने पास आकर कहने सुनने दे। छोटे नौकर औरों को अपना महत्त्व दिखाने के लिए जो बात हुई उसे सीधे मालिक के पास जाकर कहना बहुत पसंद करते हैं। जहां वे एक बार ऐसा करने पाए कि नाकों दम कर देंगे। फिर मालिक को रसोईदारों, ख़िदमतगारों, चपरासियों, कोचवानों और साईसों के झगड़े आप निपटाने पड़ेंगे, और यदि सब के सब सलाह करके नौकरी छोड़ देंगे तो नौकर भी खुद ढूंढना

पड़ेगा। पर यदि ऐसे छोटे मोटे काम वह भिन्न भिन्न विभागों के अफ़सरों पर छोड़े रहेगा तो उसे अच्छे अच्छे काम करने का समय मिलेगा।

संगत—यह एक पुरानी कहावत है कि "जैसी संगत वैसी बुद्धि"। इससे साथी चुनने में बड़ी सावधानी करनी चाहिए। जो लोग दिहात में रहते हैं उन्हें अच्छी संगत मिलना बड़ा कठिन होता है इससे बड़े बड़े धनियों और रियासतदारों को भी अपने नौकर चाकरों का साथ करना पड़ता है जिसका फल बहुत बुरा होता है। इस देश के रईसों के यहां यह बड़ी बुरी चाल है कि वे अपने लड़कों को नौकर चाकरों के लड़कों का साथ करने देते हैं। धीरे धीरे नौकर चाकरों के ये ही लड़के मालिक के लड़कों के गहरे दोस्त हो जाते हैं और उन पर बहुत कुछ ज़ोर रखने लगते हैं। उनके मां बाप इसके लिए उन पर बहुत प्रसन्न होते हैं और उनके द्वारा अपना काम निकालना चाहते हैं। ख़िदमतगारों के ये लड़के आगे चलकर इतने इतरा जाते हैं कि अपने को मालिकों के बराबर समझने लगते हैं और राजकाज के मामलों में दख़ल देने लगते हैं। फिर तो बिना इनके माने जाने योग्य से योग्य मैनेजर या सेक्रेटरी की ख़ैरियत नहीं।

मालिक की लड़कियों का जब ब्याह होता है तब उन के साथ उनसे हिली मिली कुछ लौंडियां या नौकरों की लड़-

कियां की जाती हैं। ये वहां भी अपना ज़ोर रखना चाहती हैं और कभी कभी घर के प्राणियों में झगड़ा लगा देती हैं।

अस्तु, उत्तम उपाय तो यह है कि अपने सम्बन्धियों या प्रतिष्ठित पड़ोसियों के लड़कों में से कुछ अच्छे लड़कों को चुनकर उन्हें अपने लड़कों के साथ शिक्षा पाने के लिए कर दे। यदि यह न हो सके तो अपने कर्म्मचारियों के लड़कों में से चुने। सारांश यह कि छोटे छोटे नौकर चाकरों को अपने लड़कों के साथ बहुत हेल मेल न बढ़ाने देना चाहिए।

मनबहलाव—केवल समय काटने के लिए ही नहीं बल्कि स्वास्थ्य के लिए भी थोड़ी बहुत कसरत खेल कूद, या मनबहलाव जरूरी है। पर ध्यान इस बात का रहे कि कहीं इन बातों की धुन न हो जाय। कसरत और खेलकूद का मतलब इतना ही है कि स्वास्थ्य की रक्षा रहे जिससे काम अच्छी तरह हो सके और मनबहलाव इस लिए है कि लगातार एक ही काम को करते करते जी भी न ऊबे और समय भी बिलकुल ख़ाली न जाय। जहां मनबहलाव का कोई उचित प्रबन्ध नहीं रहता वहां लोग, विशेष कर रईसों के लड़के, बुरी संगत में पड़ जाते हैं और धीरे धीरे उन्हें कुछ ऐसे व्यसन लग जाते हैं जिनके कारण वे अपना और अपने घर का सत्यानाश करके रख देते हैं। इसी से कसरत और खेलकूद के सिवा लिखना, पढ़ना, चित्रकारी और संगीत आदि भी मनबहलाव के लिए चाहिए। राजाओं और रियासतदारों

के लड़कों को प्राय: दिहात में रहना पड़ता है इससे इसका ध्यान रखना चाहिए कि उनके मनबहलाव के लिए अच्छी अच्छी बातें हों और वे नौकर चाकरों के लड़कों के साथ बहुत हेल मेल न बढ़ाने पावें ।

॥ इति ॥